

मेवाड़ का इतिहास



मेवाड़ साम्राज्य



महाराणा प्रताप के बीना इतिहास खाली है,
वो बहादुरी की मिसाल खाली हैं,
जिसने इस धरती माँ को अपने लहु से सिन्चा हैं,
वो कुरुक्षेत्र की धरती आज भी लाली हैं !

जय राजपुताना !

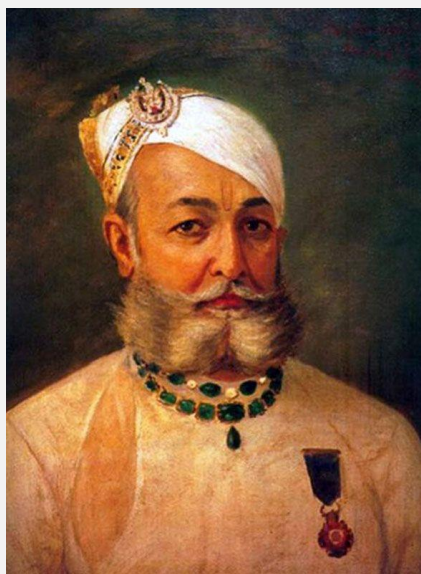
॥ जय मातादी ॥

हूणों के पराभव के बाद राजस्थान में जिन क्षत्रिय (राजपूत) वंशों ने अपने राज्य स्थापित किये उनमें गुहिल वंशीय राजपूत प्रमुख हैं। गौरीशंकर हीराचंद ओझा ने इन्हें विशुद्ध सूर्यवंशीय क्षत्रिय माना है। मेवाड़ राजवंश की स्थापना ईसा की पाँचवीं शताब्दी में **गुहिल** नाम के एक प्रतापी राजा ने की थी। भारत की आजादी के समय यह विश्व का सबसे पुराना राजवंश था। लगभग 1400 वर्ष की अवधि में 75 शासकों की शृंखला ने निर्विघ्न रूप से मेवाड़ पर शासन किया। इस वंश ने शौर्य और पराक्रम की दुनिया में अपना नाम स्वर्ण अक्षरों में लिखा है। भारतीय शासकों में महाराणा का स्थान सबसे उच्च रहा है। प्रारंभ में गुहिल मेवाड़ में शक्तिशाली बने और वहीं से ये राजस्थान के अन्य भागों जाकर बसे। अपने वंश के प्रतापी राजा गुहिल के नाम पर इन्होंने अपने आपको गुहिल वंशीय माना। विक्रम संवत् 1331 (ई. 1274) की चित्तौड़ प्रशस्ति से गुहिल वंश की अनेक शाखाओं का पता चलता है। मुहता नैणसी तथा कर्नल टॉड ने भी इनकी 24 शाखाओं का उल्लेख किया है। इनमें से कल्याणपुर के गुहिल, चाटसू के गुहिल, मालवा, वागड़, धोड़, काठियावाड़, मारवाड़ तथा मेवाड़ के गुहिल प्रमुख हैं।

मेवाड़ के गुहिलों में प्रारंभिक राजाओं में **बापा** महाप्रतापी हुए। यद्यपि इसका काल निर्धारित नहीं किया जा सका है तथापि इसके काल का सोने का सिक्का उसके समृद्ध तथा शक्तिशाली होने की घोषणा करता है। इन राजाओं को रघुवंश की कीर्ति फैलाने वाला बताया गया है। बापा के बाद शिलादित्य, अपराजित, कालभोज, खूम्माण (प्रथम), भर्तृभट्ट, अल्लट तथा नरवाहन आदि राजा हुए। इनमें से कुछ को भीलों से निरंतर संघर्ष करना पड़ा तथा जय-पराजय के अनेक उतार-चढ़ाव देखने पड़े। दसवीं शताब्दी में नरहवान से लेकर 13 वीं शताब्दी में **जैत्रसिंह** के मेवाड़ की गद्दी पर बैठने तक का काल गुहिलों के पराभव का काल है। ये राजा किसी तरह अपना अस्तित्व बनाये रखने में सफल रहे किंतु उनका शौर्य, पराक्रम और वैभव क्षीण रहा। जैत्रसिंह ई. 1213 में मेवाड़ की गद्दी पर बैठा। उसने गुहिलों की डूबती नौका का पुनरूद्धार किया। उसका पुत्र तेजसिंह, पौत्र समरसिंह तथा प्रपौत्र रतनसिंह भी प्रतापी राजा हुए। **रतनसिंह** ई. 1302 में मेवाड़ की गद्दी पर बैठा। उसी वर्ष अल्लाउद्दीन खिलजी ने चित्तौड़ पर आक्रमण किया तथा रावल रतनसिंह को धोखे से बंदी बना लिया।

उसने रावल के आदमियों को यह संदेश भेजा कि यदि **रानी पद्मिनी** अल्लाउद्दीन को सौंप दी जाये तो रत्नसिंह को छोड़ दिया जायेगा। **गोरा और बादल** ने खिलजी से कहलवाया कि आपकी मांग पूरी की जायेगी तथा रानी अपनी 700 दासियों के साथ बादशाह की सेवा में उपस्थित होगी किंतु पहले रानी अपने पति महाराजा रत्नसिंह से मिलेगी। गोरा चित्तौड़ की रानी पद्मिनी का चाचा था और बादल रानी पद्मिनी का भाई था। बादशाह ने उनकी यह मांग स्वीकार कर ली। रानी के स्थान पर गोरा और बादल तथा दासियों के स्थान पर सिपाही डोलियों में छिप गये। उन्होंने राणा को बादशाह के चंगुल से निकाल कर दुर्ग में भेज दिया और स्वयं शत्रु सिपाहियों को यमलोक पहुंचाते हुए वीर गति को प्राप्त हुए। बाद में खिलजी ने दुर्ग पर आक्रमण करके रावल रतनसिंह को मार दिया। रतनसिंह की रानी पद्मावती ने जौहर किया। इसी के साथ गुहिलों की रावल शाखा का अंत हो गया। ई. 1326 में गुहिलों की **राणा शाखा के राणा हमीर** ने पुनः चित्तौड़ पर अधिकार कर

लिया। यह शाखा **सीसोदा गाँव** से निकली थी इसलिये इस शाखा के वंशजों को सिसोदिया भी कहते हैं। तब से लेकर स्वतंत्रता प्राप्ति तक मेवाड़ पर इसी शाखा ने शासन किया।



महाराणा कुंभा (1433-66)

जन्म - 1403 ई. में देवगढ़ के समीप

पिता - मोकल

माता - सौभाग्यदेवी

उपाधियाँ- महाराजाधिराज, रावराय, राणेराय, राजगुरू, हिंदू सुरताण अभिनवभरताचार्य, रणेरासो, हालगुरू (शासन कला का सर्वोच्च शासक), राजगुरू, दानगुरू, परमगुरू, नरपति, अखपति, गैनपति व छापगुरू (छापामार युद्ध पद्धति में निपुण) प्रमुख उपाधियाँ थी।

मुस्लिम शासकों ने **हिंदू सुरताण** की उपाधि दी थी।

कुंभा के द्वारा लड़े गए प्रमुख युद्ध

अर्बली का युद्ध :- कुंभा व जोधा के मध्य लड़ा गया जिसमें जोधा पराजित हुआ।

सारंगपुर का युद्ध (1437) :- कुंभा व मालवा के शासक महमूद खिलजी व के मध्य लड़ा गया जिसमें महमूद खिलजी की हार हुई।

चम्पानेर की संधि (1453 ई.) :- गुजरात का सुल्तान कुतुबुद्दीन व मालवा का शासक महमूद ने कुंभा के विरुद्ध चम्पानेर की संधि की किन्तु कुंभा ने दोनों को पराजित कर दिया।

कुंभा की स्थापत्य कला को विशेष देन है

कविराज श्यामलदास के अनुसार कुंभा ने मेवाड़ राज्य में 84 में से 32 दुर्गों का निर्माण करवाया। कुंभा ने अपनी पत्नी **कुंभलदेवी** की स्मृति में कुंभलगढ़ का निर्माण किया इसे **मछिन्दरपुर** के नाम से भी जाना जाता है। इसमें बने कुंभा के महल को कटारगढ़ कहते हैं।

कीर्ति स्तंभ (विजय स्तंभ)- कीर्ति-स्तंभ के सूत्रधार जेता थे जिसकी सहायता इनके पुत्र नापा व पूजा ने की थी। यह स्तंभ 120 फुट ऊँचा तथा 30 फुट चौड़ा है। इसमें 157 सिद्धियाँ हैं। यह नौ

मंजिला है अतः इसे नौखण्डा महल भी कहते हैं। इसे हिन्दू मूर्तिकला का विश्वकोष भी कहा जाता है। **डॉ. उपेन्द्रनाथ डे ने इसे विष्णु-स्तंभ कहा है।** क्योंकि इस स्तंभ के मुख्य द्वारा पर भगवान विष्णु की मूर्ति है। **फर्ग्यूसन** ने लिखा है कि "ये रोम के टार्जन के समान हैं। लेकिन इसकी कला उसकी अपेक्षा अधिक उन्नत है। यह रोमन कला कृतियों से कहीं अधिक उत्कृष्ट कलाकृति है।" कीर्ति स्तंभ की तीसरी मंजिल पर अरबी भाषा में **नौ बार अल्लाह** लिखा हुआ है जो कुम्भा की धार्मिक सहिष्णुता का प्रतीक है। इसे, हिन्दू देवी-देवताओं का अजायबघर भी कहते हैं।

कुंभा में चित्तौड़ में **कुंभश्याम व वराह मंदिर** का निर्माण करवाया तथा एकलिंग जी में मंदिर का जीर्णोद्धार करवाया।

कीर्ति स्तंभ प्रशस्ति की रचना **अत्रि, कवि और महेश** ने की थी। अत्रि की मृत्यु हो जाने पर महेश ने इसे पूर्ण किया।

मण्डन कुंभा का मुख्य वास्तुकार था जिसने कुंभलगढ़ दुर्ग ही रचना की। वास्तुकार मण्डन गुजरात निवासी था, इसकी छतरी शिक्षा नदी के किनारे उन्जैन में बनी हुई है। इसी स्थान पर दुर्गादास राठौड़ की छतरी भी है। मण्डन ने राजवल्लभ, प्रसादमण्डन, वास्तु मण्डल, रूप मण्डल, व देवमूर्ति प्रकरण नामक ग्रंथ की रचना की। मण्डन के भाई नाथा ने वास्तुमंजरी लिखी तथा उसके पुत्र गोविंद ने उद्धार धोरिणी, कलानिधि व द्वारदीपिका नामक ग्रंथ की रचना की।

कुंभा ने **संगीतराज, संगीत मीमांसा व सूडप्रबंध** नामक संगीत ग्रंथों की रचना की। चण्डीशतक की व्याख्या तथा गीत गोविंद पर रसिकप्रिया नाम की टीका लिखी। संगीत रत्नाकर की टीका तथा कामराजरतिसार लिखा। कुंभा को नाट्यशास्त्र का अच्छा ज्ञान था तथा वे वीणा बजाने में भी अति निपुण थे।

कान्ह व्यास :- एकलिंग महात्म्य का लेखक था तथा कुंभा का वैतनिक कवि था।

श्री सारंग व्यास :- कुंभा के संगीत गुरु थे।

रमाबाई :- कुंभा की पुत्री, जो संगीतशास्त्र की ज्ञाता थी। जावर में जोगिनीपुर मंदिर का निर्माण करवाया।

कुंभा के समय प्रमुख **जैन विद्वान :-** सोम सुन्दर, मुनि सुन्दर, भुवन सुन्दर, जयचन्द्र सूरी तथा सोमदेव प्रमुख हैं।

कुंभा के शासनकाल में 1439 ई. में जैन व्यापारी **धरणक शाह ने रणकपुर के जैन मंदिर** का निर्माण करवाया इसे स्तंभों का मंदिर (1444 स्तंभ), चौमुखा मंदिर तथा वेश्याओं का मंदिर भी कहते हैं। ये भगवान आदिनाथ का मंदिर है। इसका शिल्पी देपाक था।

वृद्धा अवस्था में कुम्भा को उन्माद रोग हो गया था। कुम्भलगढ़ दुर्ग में कुम्भा की हत्या उसके पुत्र **उदा** ने कर दी थी।

जैन कीर्ति स्तंभ- 11वीं सदी में निर्मित यह इमारत खवासन स्तंभ के नाम से जानी जाती है। इसका निर्माण बघेर वंशीय शाह जीजा के द्वारा करवाया गया था। इसमें प्रमुख रूप से आदिनाथ

की मूर्ति स्थापित है। यह इमारत 7 मंजिल है, इसकी ऊँचाई 75 फुट है। यह इमारत चित्तौड़ में ठीक विजय स्तंभ के सामने स्थित है।



रायमल (1473-1509)

ऊदा के स्थान पर रायमल को शासक बनाया गया। कहा जाता है एकलिंग जी की वर्तमान चतुर्मुखी शिवलिंग की प्रतीक्षा इन्हीं के शासनकाल में स्थापित की गई। रायमल के तीन थे- जयमल, पृथ्वीराज और सांगा।

पृथ्वीराज :- उडणा राजकुमार के नाम से प्रसिद्ध। इसी की पत्नी के नाम पर अजमेर दुर्ग का नाम तारागढ़ पड़ा। इसकी छतरी कुंभलगढ़ दुर्ग में बनी हुई है।

सांगा (1509-1528 ई.)-

हिन्दूपति। हिंदूपति नाम से प्रसिद्ध था। सांगा जब महाराणा बना तब दिल्ली का शासक सिकन्दर लोदी, गुजरात का महमूदशाह बेगड़ा तथा मालवा का नासिरशाह खिलजी था।

सांगा अपने अज्ञातवास के दौरान श्रीनगर (अजमेर जिले में) के **कर्मचंद पवार** की सेवा में रहा था। शासक बन कर कर्मचंद को रावत की पदवी दी।

तुजुक-ए-बाबरी में लिखता है कि बाबर के आक्रमण के समय भारत का सबसे शक्तिशाली शासक कृष्णदेवराय था तथा उत्तर का शासक राणा सांगा था।

बाबरनामा के अनुसार राणा सांगा ने भारत पर आक्रमण करने के लिए उसे आमंत्रित किया था। खानवा युद्ध से पूर्व बाबर ने **तमगा** नामक कर समाप्त कर दिया, युद्ध को जिहाद घोषित किया तथा स्वयं ने गाजी (धर्म योद्धा) उपाधि धारण की।

मुहम्मद शरीफ नामक ज्योतिष ने खानवा युद्ध में बाबर के हार की भविष्यवाणी की थी।

बाबर अपनी आत्मकथा में कहता है कि चित्तौड़ में अत्यधिक गर्मी पड़ने व पानी की कमी होने से वह चित्तौड़ पर अधिकार नहीं करता है।

खानवा के युद्ध में सांगा का साथ देने वालों में मारवाड़ के राव गांगा की तरफ से मालदेव, मेड़ता के रायमल व रतन सिंह, बीकानेर से कल्याण आमेर का राजा पृथ्वीराज, डूंगरपुर का रावल

उदयसिंह तथा काठियावाड़ से झाला अज्जा ने भाग लिया। सांगा युद्ध मैदान में घायल हो गए तब इन्हीं झाला अज्जा ने सांगा का छत्र धारण कर सांगा का स्थान लिया। हसनखाँ मेवाती तथा महमूद लोदी (इब्राहिम लोदी) ने भी सांगा की से युद्ध में भाग लिया था।

खानवा की हार के बाद सांगा के अधिकारियों द्वारा उसे कालपी में जहर दे दिया जिससे 30 जनवरी 1528 ई. को इस लोक से विदा हो गये। माण्डलगढ़ में अंतिम संस्कार किया गया।

पाति पेरवन परम्परा-

राजपूत कालीन एक प्राचीन परम्परा जिसे राजपूताना में पुनर्जीवित करने का श्रेय राणा सांगा को दिया जाता है। राजपूताने का वह पहले शासक था जिसने अनेक राज्यों के राजपूत राजाओं को विदेशी जाति विरुद्ध संगठित कर उन्हें एक छत्र के नीचे लाया।

खानवा युद्ध में हार का कारण सलहँदी तँवर द्वारा विश्वासघात बताया जाता है।



राणा रतन सिंह (1528-31 ई.)-

सांगा के बाद रत्नसिंह मेवाड़ के शासक बनें। हाड़ी रानी कर्मवती ने सांगा के जीवित रहते ही अपने पुत्र विक्रमादित्य तथा उदयसिंह के लिए रणथम्भौर का किला मांगा लिया तथा स्वयं उनकी संरक्षिका बन गई। राणा रत्न सिंह व कर्मवती के भाई सुरजन हाड़ा का साथ में आखेट खेलते हुए ही किसी बात पर विवाद हो गया जिसमें रत्नसिंह की मृत्यु हो गई। 1531 ई. में।

राणा विक्रमादित्य

1531 ई. में राणा रतनसिंह के स्थान पर शासक बना।

1534 ई. में गुजरात का शासक बहादूरशाह मेवाड़ पर आक्रमण करता है तथा उदयसिंह व विक्रमादित्य को सुरक्षित बूंदी भेज दिया जाता है। देवलिये के रावत बाघसिंह को महाराणा का प्रतिनिधि (सेना का नेतृत्व) नियुक्त किया जाता है और मेवाड़ का दूसरा शाका होता है।

राणा उदयसिंह

- 1537 ई. में कुंभलगढ़ में उदयसिंह का राज्याभिषेक हुआ।
- 1540 ई. में उदयसिंह व बनवीर के मध्य माहोली (मावली) गाँव में युद्ध हुआ जिसमें उदयसिंह विजय रहे। 1540 में चित्तौड़ के स्वामी बन गये।
- चित्तौड़ दुर्ग में बनवीर ने तुलजा भवानी के मंदिर का निर्माण कराया।
- **1559 ई. में उदयसिंह ने उदयपुर शहर की नींव डाली तथा उदयसागर झील का निर्माण किया।**
- सितम्बर 1567 अकबर चित्तौड़ अभियान पर रवाना हुआ तथा उदयसिंह ने किले का भार जयमल व फत्ता पर छोड़कर ईडर चले गये। जयमल-फत्ता वीरगति को प्राप्त हुए तथा फत्ता की **रानी फूल कंवर** ने चित्तौड़ दुर्ग में जौहर किया जिसे चित्तौड़ का **तीसरा शाका** कहते हैं। अबुल फजल लिखता है कि चित्तौड़ विजय करने हेतु अकबर ने साबात का निर्माण करवाया जिसकी रक्षा में रहते हुए प्रतिदिन 200 आदमी मारे जाते थे। 25 फरवरी 1568 को अकबर ने चित्तौड़ दुर्ग अधिकृत कर लिया।
- 28 फरवरी 1572 को उदयसिंह का गोगुंदा में देहांत हो गया। (होली के दिन) जयमल-फत्ता की मूर्तियाँ आगरा व बीकानेर के जूनागढ़ किले में लगाई गई थी।
- 1557 ई. में उदयसिंह व अजमेर के हाजी खाँ के मध्य हरमाड़ा नामक स्थान पर युद्ध हुआ था।



राणा प्रताप (1540-1597 ई.)

जन्म- 9 मई 1540 कुंभलगढ़ में हुआ।

माता-जयवंता बाई, पाली के सोनगरा अखैराज की पुत्री थी।

- उदयसिंह ने भटियाणी रानी (धीरबाई) के प्रभाव में जगमाल को अपना उत्तराधिकारी बनाया जिसका सामंतों ने विरोध किया तथा प्रताप का **प्रथम राज्याभिषेक 28 फरवरी 1572 को गोगुंदा में हुआ** रावत कृष्णदास ने तलवार बांधी तथा दूसरा राज्याभिषेक 1572 में कुंभलगढ़ में हुआ जहाँ राव चन्द्रसेन भी उपस्थित थे।
- जगमाल अकबर की सेवा में चला गया जहाँ उसे जहाजपुर का परगना जागीर के रूप में दिया गया। 1583 के दत्ताणी के युद्ध में उसकी मृत्यु हो गई।
- मुस्लिम इतिहासकारों ने अपने ग्रंथों में प्रताप के नाम के लिए **कीका** शब्द का प्रयोग किया है।
- मुगल शासक अकबर ने प्रताप से सुलह वार्ता के लिए 1572-73 के मध्य **चार शिष्ट मण्डल** प्रताप के पास भेज-
- 1572 - जलाल खॉ कोरची
- 1573 - कुवर मानसिंह
- इस दौरान ही मानसिंह व झुंगरपुर के महारावल आसकरण के मध्य बिलपण नामक स्थान पर युद्ध हुआ जिसमें महारावल की पराजय हुई।
- सितम्बर 1573 - भगवन्तदास
- दिसम्बर 1573 - टोडरमल

हल्दीघाटी का युद्ध (18 जून 1576)

- रणछोड कृत राजप्रशस्ति, अमरकाव्यम्, माला सांद (झूलणा महाराणा प्रताप जीरा), नैणसी री ख्यात, सगत रासौ तथा अबुल फजल ने इस युद्ध को खमनोर का युद्ध कहा है। बँदायूनी ने इसे गोगुन्दा का युद्ध कहा वह इस युद्ध में सेना के साथ था। जबकि जेम्स टॉड ने प्रथम बार इस युद्ध को हल्दीघाटी युद्ध के नाम से संबोधित किया।
- टॉड ने हल्दीघाटी को मेवाड़ की **थर्मोपल्ली** कहा था।
- **झाला बीदा ने** प्रताप के छत्र को धारणकर प्रताप को सकुंशल युद्ध भूमि से बाहर निकाला।
- **चेतक की समाधि बलीचा गाँव में बनी हुई है।**
- अकबर ने उदयपुर फतह करने के उपलक्ष में एक सोने का सिक्का ढलवाया जिस पर अंकित था सिक्का ढाला **गयामुहम्मदाबाद** उर्फ उदयपुर में, जो जीता जा चुका है।" मई 1577 अकबर अपनी राजधानी लौट गया।
- हल्दीघाटी के युद्ध के बाद प्रताप के खिलाफ अकबर ने क्रम से **चार लागों** को भेजा था :-

भगवान दास

शाहबाज खान 1577, 78, 79

अब्दुर रहीम खानखाना 1580-81

जगन्नाथ कछवाह दिसम्बर 1584

- शाहबाज खान 1577 अपने प्रथम अभियान में कुंभलगढ़ के अजेय दुर्ग को जीतने में सफल रहता है। कुंभलगढ़ के किलेदार प्रताप के मामा भाण सोनगरा थे जो काम आते हैं। शाहबाज खाँ, गाजी खाँ बदरुखी को दुर्ग का किलेदार नियुक्त करता है। प्रताप कुंभलगढ़ से ईडर तथा वहाँ से चूलिया ग्राम पहुंच जाते हैं। यहीं चूलिया ग्राम में प्रताप को ताराचन्द व भामाशाह मालवा की लूट से प्राप्त 25 लाख रू. व दो हजार अशर्फियाँ भेंट किया। इसी समय रामा महासहाणी जो प्रधान था उसके स्थान पर **भामाशाह** को नियुक्त किया जाता है।
- प्रताप ने 1582 ई. में दिवेर के शाही थाने पर हमला कर शाही थाने के संरक्षक सुल्तान खाँ को पराजित कर दिया। **टॉड ने दिवेर को मेवाड़ का मैराथन कहाँ है।** दिवेर के बाद कुंभलगढ़ को भी जीत लिया।
- 1585 ई. में प्रताप ने चावंड के लूणा राठौड़ को परास्त कर **चावंड** को अपनी राजधानी बनाया। 1585 के बाद अकबर ने प्रताप के विरुद्ध कोई अभियान नहीं किया, प्रताप ने चावंड को अपनी राजधानी बनाया तथा वहाँ महल एवं चामुण्डा माता का मंदिर बनाया।
- 1597 ई. में बाघ का शिकार करते समय धनुष की प्रत्यंचा खींचने के दौरान उनकी आंतों में अंदरूनी चोट आ गई, जिसकी वजह से 19, जनवरी 1597 को प्रताप का निधन हो गया। **बाडोली गाँव में प्रताप की 8 खम्भो वाली छतरी बनी हुई है।**
- **रामा सांदू व माला सांदू** नामक वीरों ने भी हल्दीघाटी युद्ध में भाग लिया था।
- **चक्रपाणि मिश्र :-** मथुरा का विद्वान, प्रताप के दरबार में तीन ग्रंथों की रचना की थी- विश्ववल्लभ, मुहूर्तमाला एवं राज्याभिषेक पद्धति।

- **पृथ्वीराज राठौड :-** बीकानेर के शासक रायसिंह का भाई, इसे डिंगल का है होरस कहते हैं। इसकी प्रसिद्ध रचना 'वेलीकिसन रूकमणी री' इसने प्रताप की प्रशंसा में भी दोहे लिखे।

प्रताप के व्यक्तित्व के बताते ये कथन-

- **बदायूनी :-** "गोगुंदा से फतेहपुर सीकरी लौटते समय राणा की हार पर किसी ने विश्वास नहीं किया।"
- **खानखाना :-** "तुर्की का पतन हो जावेगा पर प्रताप का वतन और धर्म शाश्वत रहेगा।"
- अमरसिंह ने शेरपुर ठिकाने से खानखाना परिवार की स्त्रियों को बंदी बना लिया था किंतु प्रताप के आदेश से पुनः सआदर भिजवा दिया। यह प्रताप के उच्च आदर्शों को बताते हैं।

अमरसिंह (1597-1615)

- एकमात्र शासक जो चावंड में सिंहासन पर बैठा (राज्याभिषेक हुआ)
- जहाँगीर शासक बनते ही मेवाड़ को अपनी प्राथमिकता में ला दिया तथा जहाँगीर ने मेवाड़ी सामंतों में फूट डालने के लिए अमरसिंह के चाचा सगर को चित्तौड़ का महाराणा, घोषित कर दिया। जहाँगीर ने मेवाड़ पर चार अभियान भेजे-
- **शहजादा परवेज - 1605**
- **महाबत खाँ - 1608**
- **अब्दुल्ला खाँ - 1609**
- **राणपुर का युद्ध - अब्दुल्ला खाँ व मेवाड़ के मध्य**
- **बादशाह खुर्रम - 1613 ने चावंड पर अधिकार कर लिया ।**
- **1615 ई. में जहाँगीर व अमरसिंह के मेवाड़-**
मुगल संधि होती है। यह संधि गोगुदा में हुई जिसमें महाराणा की तरफ सेशुभकर्ण व ह रिदास झाला उपस्थित हुए थे।
- आहाड के महासतियां में पहली छतरी अमरसिंह की है।
- अमरसिंह राजपाट छोड़कर नौ-चोकी चला जाता है।

कर्ण सिंह (1620-1628 ई.)

- कर्ण सिंह के समय खुर्रम जगमंदिर में शरण लेता है। जगमंदिर का निर्माण कार्य जगतसिंह के समय पूर्ण होता है।

जगतसिंह प्रथम (1628-1652 ई.)

- जगदीश मंदिर का निर्माण करवाया। कहा जाता है कि भगवान जगन्नाथ ने स्वप्न में आकर मंदिर बनाने को कहा था। यह मंदिर पंचायतन श्रेणी का है। यह मंदिर अर्जुन की निगरानी में सूत्रधार भाणा व उसके पुत्र मुकुन्द की अध्यक्षता में बना। मंदिर की विशाल जगन्नाथ राय प्रशस्ति की रचना कृष्णभट्ट ने की।

- जगतसिंह का समय मेवाड़ी चित्रकला का स्वर्णकाल माना जाता है।
- जगतसिंह का समय मेवाड़ी चित्रकला का स्वर्णकाल माना जाता है।
- जगतसिंह की धाय माँ नौजु धाय ने एक मंदिर का निर्माण कराया जो धाय मंदिर के नाम से प्रसिद्ध है।

राजसिंह (1652-1650 ई)

- औरंगजेब ने उत्तराधिकारी संघर्ष में राजसिंह से सहायता हेतु इन्द्रभट्ट को भेजा।
- 1679 ई. में राजसिंह ने **किशनगढ़ की राजकुमारी चारूमति** से विवाह करने पर औरंगजेब से संबंध बिगड़ जाते हैं।
- 1679 ई. में औरंगजेब ने जजिया कर लगाया तथा औरंगजेब ने जब मंदिरों को नष्ट करने के आदेश दिए तब मथुरा के गुस्साई जी दामोदर दास व गोविन्द दास जी ने राजसिंह की सहायता से सिहाड़ गाँव में श्रीनाथ जी की प्रतिमा को स्थापित किया। औरंगजेब स्वयं 1679 को उदयपुर अभियान पर आया।
- 1662 ई. में राजसमंद झील की नींव रखी जो 1668 में पूर्ण हुई। वहाँ नौ-चौकी पर 25 शिलाओं पर शिलालेख खुदवाया जो विश्व का सबसे बड़ा शिलालेख है। इसे रणछोड़ भट्ट तैलंग में उत्कीर्ण किया था। इसे जयसिंह ने निश्चित स्थान पर लगवाया।
- राजसिंह ने अपनी माता जैनादे के नाम पर बड़ी गाँव में जैनासागर का निर्माण करवाया था।
- मेवाड़ के महाराणाओं में राजसिंह को विजयकटकातु के नाम से जाना जाता है, राजसिंह ने सदैव अपनी प्रजा का ध्यान रखते हुए सैन्य व्यवस्था का संचालन किया, जिसके कारण इस उपाधि से नवाजा गया।

जयसिंह (1680-98 ई.)

- शहजादे आजम से 1681 में संधि कर मेवाड़ में जजिया समाप्त कर दिया। इसके बदले माण्डलपुर और बदनोर के प्रमुख मुगल साम्राज्य को दे दिये तथा 1691 ई. में जयसमंद झील का निर्माण करवाया।

अमरसिंह द्वितीय (1698-1710)

- **प्रसिद्ध देवारी का समझौता :-** अमरसिंह द्वितीय, सवाई जयसिंह व जोधपुर के मध्य हुआ था। अजित सिंह राजा बनने में सहायता करने का वचन दिया था व अमरसिंह ने अपनी पुत्री चन्द्रकुँवरी का विवाह सवाई जयसिंह से करना निश्चित किया तथा उससे उत्पन्न संतान ही जयपुर का शासक बनेगा ऐसा तय हुआ।
- इन्हीं के शासनकाल में रियासत के प्रबंध, जागीरदार व सामंतों से संबंधित नियम बनाकर मेवाड़ के प्रशासन को सुदृढ़ किया यहाँ तीन प्रकार के सामंत होते थे- 16,32 व गोल।

संग्राम सिंह द्वितीय

- 17 जुलाई 1734 को हुरड़ा सम्मेलन की अध्यक्षता करना निश्चित हुआ था।
- नादिरशाह के आक्रमण के समय 1739 ई. मेवाड़ के शासक जगतसिंह थे।
- उदयपुर में सहेलियों की बाड़ी का निर्माण करवाया। किंतु इसी दौरान इनकी मृत्यु होने से इनके पुत्र जगतसिंह द्वारा हुरड़ा सम्मेलन की अध्यक्षता की।

भीम सिंह

- **राजकुमारी कृष्ण कुमारी** का विवाह जोधपुर शासक भीमसिंह से निश्चित हुआ किंतु उनकी मृत्यु होने से यह विवाह जयपुर शासक जगतसिंह से निश्चित हो जाता है किंतु जोधपुर शासक मानसिंह विवाद शुरू कर देते हैं। जिसकी परिणति बड़ी दुःखद होती है तथा अंजीत सिंह चुड़ावत व अमीर खाँ पिण्डारी के सुझाव पर कृष्णाकुमारी को जहर दे दिया जाता है।
- **गिंगोली का युद्ध (1807, नागौर) :-** मेवाड़ व जयपुर की सम्मिलित सेना जोधपुर को पराजित कर देती है।



पूरा नाम – महाराणा प्रताप सिंह

जन्म – 9 मई, 1540

जन्मस्थान – कुम्भलगढ़ दुर्ग

पिता – राणा उदय सिंह.

माता – महाराणी जयवंता कँवर

विवाह – उन्होंने 11 शादियाँ की थी – महारानी अजब्धे पंवार, अमरबाई राठौर, शहमति बाई हाडा, लखाबाई, जसोबाई चौहान और 6 पत्निया.

संतान – अमर सिंह, भगवान दास और 17 पुत्र

महाराणा प्रताप का इतिहास –

बचपन से ही महाराणा प्रताप साहसी, वीर, स्वाभिमानी एवं स्वतंत्रताप्रिय थे. सन 1572 में मेवाड़ के सिंहासन पर बैठते ही उन्हें अभूतपूर्व संकोटो का सामना करना पड़ा, मगर धैर्य और साहस के साथ उन्होंने हर विपत्ति का सामना किया. मुगलों की विराट सेना से

उनका पूरा नाम महाराणा प्रताप सिंह है। उनका जन्म स्थान कुम्भलगढ़ दुर्ग में 9 मई 1540 को पिता राणा उदय सिंह और माता महाराणी जयवंता कँवर के घर में हुआ। उन्होंने अपने जीवन काल में कुल 11 शादियाँ की थी।

महाराणा प्रताप के सभी 11 पत्नियों के नाम

महारानी अजब्धे पुनवर, अमरबाई राठौर, रत्नावतिबाई परमार, जसोबाई चौहान, फूल बाई राठौर, शाहमतिबाई हाडा, चम्पाबाई झांती, खीचर आशा बाई, अलाम्देबाई चौहान, लखाबाई, सोलान्खिनिपुर बाई।

महाराणा प्रताप के सभी 17 पुत्र के नाम

अमर सिंह, भगवन दास, शेख सिंह, कुंवर दुर्जन सिंह, कुंवर राम सिंह, कुंवर रैभाना सिंह, चंदा सिंह, कुंवर हाथी सिंह, कुंवर नाथा सिंह, कुंवर कचरा सिंह, कुंवर कल्याण दास, सहस माल, कुंवर जसवंत सिंह, कुंवर पूरन माल, कुंवर गोपाल, कुंवर सनवाल दास सिंह, कुंवर माल सिंह।

महाराणा प्रताप की कहानी

महाराणा प्रताप उदयपुर, मेवाड़ में शिशोदिया राजवंश के राजा थे। उनकी वीरता और दृढ़ संकल्प के कारण उनका नाम इतिहास के पन्नों में अमर है। उन्होंने कई वर्षों तक मुगल सम्राट अकबर के साथ संगर्ष किया और उन्हें कई बार युद्ध में भी हराया। वे बचपन से ही शूरवीर, निडर, स्वाभिमानी और स्वतंत्रता प्रिय थे।

स्वतंत्रता प्रेमी होने के कारण उन्होंने अकबर के अधीनता को पूरी तरीके से अस्वीकार कर दिया। यह देखते हुए अकबर ने कुल 4 बार अपने शांति दूतों को महाराणा प्रताप के पास भेजा। राजा अकबर के शांति दूतों के नाम थे जलाल खान कोरची, मानसिंह, भगवान दास और टोडरमल।

मेवाड़ में हुआ हल्दीघाटी का युद्ध

हल्दीघाटी का युद्ध भारत के इतिहास की एक मुख्य कड़ी है। यह युद्ध 18 जून 1576 को लगभग 4 घंटों के लिए हुआ जिसमें मेवाड़ और मुगलों में घमासान युद्ध हुआ था। महाराणा प्रताप की सेना का नेतृत्व एक मात्र मुस्लिम सरदार हाकिम खान सूरी ने किया और मुगल सेना का नेतृत्व मानसिंह तथा आसफ खाँ ने किया था। इस युद्ध में कुल 20000 महाराणा प्रताप के राजपूतों का सामना अकबर की कुल 80000 मुगल सेना के साथ हुआ था जो की एक अद्वितीय बात है।

कई मुश्किलों/संकटों का सामना करने के बाद भी महाराणा प्रताप ने हार नहीं माना और अपने पराक्रम को दर्शाया इसी कारण वश आज उनका नाम इतिहास के पन्नों पर चमक रहा है

कुछ इतिहासकार कुछ ऐसा मानते हैं कि हल्दीघाटी के युद्ध में कोई विजय नहीं हुआ परन्तु अगर देखें तो महाराणा प्रताप की ही विजय हुई है। अपनी छोटी सेना को छोटा ना

समझ कर अपने परिश्रम और दृढ़ संकल्प से महाराणा प्रताप की सेना ने अकबर की विशाल सेना के छक्के छुटा दिए और उनको पीछे हटने के लिए मजबूर कर दिया।

महाराणा प्रताप के प्रिय बहादुर घोड़े **चेतक** की मृत्यु भी इस युद्ध के दौरान हुई।

चेतक महाराणा प्रताप का सबसे प्यारा और प्रसिद्ध घोड़ा था। उसने हल्धि घटी के युद्ध के दौरान अपने प्राणों को खो कर बुद्धिमानी, निडरता, स्वामिभक्ति और वीरता का परिचय दिया। चेतक की वह बात भी बहुत यादगार है जिसमें उसने मुगलों को पीछे आते देख महाराणा प्रताप की रक्षा करने के लिए बरसाती नाले को लांघते समय वीरगति की प्राप्ति हुई।

महाराणा प्रताप के जीवन की कुछ अन्य मुख्य घटनाएँ

महाराणा प्रताप और अकबर

सन 1579-1585 तक पूर्व उत्तर प्रदेश, बंगाल, बिहार और गुजरात के मुगल अधिकृत प्रदेशों में विद्रोह होने लगे थे और दूसरी तरफ वीर महाराणा प्रताप भी एक के पश्चात एक गढ़ जीतते जा रहे थे और राजा अकबर भी इसके कारण पीछे हटते जा रहे थे और धीरे-धीरे मेवाड़ों पर मुगलों का दबाव हल्का पड़ता चले गया।

मुगलों को दबते देख सन 1585 में महाराणा प्रताप ने अपने प्रयत्नों को और भी सफल बनाया जब उन्होंने तुरंत ही आक्रमण कर उदयपूर के साथ-साथ 36 महत्वपूर्ण स्थान पर फिर से अपना कब्जा जमा लिया। लाख कोशिशों के बाद भी अकबर दोबारा कोई परिवर्तन नहीं ला सका और सन 1585 को उसकी मृत्यु हो गयी।

महाराणा प्रताप की मृत्यु कैसे हुई

अकबर की मृत्यु के बाद महाराणा प्रताप अपने राज्य के सुविधाओं में जुट गए परन्तु 11 वर्ष के पश्चात 19 जनवरी 1597 में अपनी नई राजधानी चावंड में उनकी मृत्यु हो गई।

एक सच्चे राजपूत, पराक्रमी, देशभक्त, योद्धा, मातृभूमि की रक्षा और उसके लिए मर मिटने वाले के रूप में महाराणा प्रताप दुनिया में सदा के लिए अमर हो गए किन्तु अपनी वीरता का गान सबके मुख और दिल में छोड़ कर गए।

राजस्थान का भारतीय इतिहास के क्षेत्र में अहम् योगदान रहा है। जिस प्रकार की भूमिका गंगा-यमुना दोआब की प्राचीन भारत के इतिहास निर्माण में रही थी उतनी ही महत्वपूर्ण भूमिका राजस्थान की मध्यकाल के इतिहास निर्माण में रही। अगर हम यू कहें कि मध्यकालीन इतिहास राजस्थान के इतिहास के बिना अधूरा है तो भी अतिशयोक्ति नहीं होगी। राजस्थान का इतिहास रोमांच से भरा पड़ा है यहीं कारण था कि रोमांटिक युग के इतिहासकार इसकी ओर आकर्षित हुए और उन्होंने अपने कलम की स्याही को दिल खोलकर इतिहास के पृष्ठों पर खर्च किया एवं इस छोटे से राज्य के इतिहास को जग प्रसिद्धि दिला दी।

इस रंगीलो राजस्थान में सच में न जाने कब क्या दिख जाये, जहाँ प्रकृति ने अपने विविध रंगों से इसका शृंगार किया है वहीं नदी, नाले, मैदान, पहाड़ एवं मरूभूमि इसकी सुन्दरता में चार चाँद लगा हुए हैं। इसके मैदानों एवं पहाड़ों पर खड़े दूर्ग, स्मारक एवं इमारते जहाँ शौर्य, कला एवं प्रेम का अनूठा मिश्रण प्रस्तुत करते हैं वहीं ये उस गौरवशाली एवं सुनहरे अतीत के साक्षी भी हैं जब राजस्थान की तूती दिल्ली में बोलती थी, उस अतीत के साक्षी है जिसमें शूरवीरों के शौर्यपूर्ण कृत्य को इतिहास के पृष्ठों पर रक्त से लिखा गया। राजस्थान की धरा वीर प्रसूता रही है जिसके पग-पग पर एक रणभूमि है जहाँ पर रणबाँकुरों के रणकौशल की गाथाएँ इसका कण-कण गाता है। इतिहास के कानन में विचरण करने वाले मनीषियों को राजस्थान की धरा पर जंमे शूरवीर, पराक्रमी योद्धाओं के साहसिक कर्मों ने सदैव आकृष्ट किया है। इन्हीं मनीषियों में एक कर्नल टॉड भी है जिन्होंने स्वयं कहाँ है कि "राजस्थान में कोई भी छोटा-सा राज्य भी ऐसा नहीं है, जिसमें थर्मोपल्ली जैसी रणभूमि न हो और शायद ही कोई ऐसा नगर मिले, जहाँ लियोनिडस जैसा वीर पुरूष उत्पन्न न हुआ हो।" यह धोरों की धरती वीरता व पराक्रम के साथ ही अपने राष्ट्र प्रेम, संस्कृति, स्वामीभक्ती एवं गौरक्षा के लिए प्राणों को उत्सर्ग करने हेतु तत्पर रहने वाले शूरवीरों की संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती है। इस धरती के केवल पुरूष ही नहीं बल्कि बच्चे व औरते तथा उससे भी बढ़कर पशु भी अपने वीरोचित एवं लोमहर्षक कर्मों से दाँतो तले अंगुलियाँ दबाने को मजबूर कर देते हैं। बच्चों में बालक चंदन तथा कालीबाई, महिलाओं में हाड़ी की रानी सलह कँवर एवं रानियों के जलती ज्वालाओं में जौहर करने के उदाहरण अतुलनीय हैं। पशुओं में सर्वविदित एवं परिचित स्वामीभक्त राणा प्रताप का घोड़ा चेतक है, जिस वीरता का प्रदर्शन चेतक ने समर भूमि में किया था उसका बेहद सुन्दर वर्णन श्यामनारायण पाण्डे ने अपनी कविता में किया है-

**रण बीच चौकड़ी भर-भर कर
चेतक बन गया निराला थ
राणा प्रताप के घोड़े से
पड़ गया हवा का पाला था।।**

यहाँ की संस्कृति ही अद्वितीय और अनुपम है। यह वह धरती है जहाँ माँ अपने बच्चे को पालने में ही यह सिखाती है भले ही अपने प्राणों की बाजी लगा देना पर अपनी धरती को शत्रु के हाथ में मत जाने देना –

**इला न देणी आपणी, हालरियाँ हुलराय
पुत सिखावे पालणै, मरण बढ़ाइ माँ॥**

वीरता, त्याग एवं राष्ट्रप्रेम के गुण तो इसकी मिट्टी एवं हवा में जिस वजह से इस माटी के वीरपुरूष रण में अपने लहू से मिट्टी को लाल करना तो स्वीकार है किंतु समर भूमि में शत्रु को पीठ दिखाना कदापि स्वीकार नहीं है। वे विजय एवं वीरगति में से एक विकल्प ही चुनते हैं अतः सच ही इस क्षेत्र की अद्भुत संस्कृति के बारे में कहा गया है-

**पांणी रौ काँई पिवै, रगत पीवणी रज्ज।
संकै मन में आ समझ, घण नह बरसै गज्ज॥**

निश्चय ही इस प्रदेश की भूमि वीर भोग्या रही है किंतु यहाँ जिगीषु एवं धीरोदात्त नयाकों के अतिरिक्त धीरललित, धर्मनिष्ठ, दैवज्ञ, दूरदर्शी, कलाप्रिय, विद्वान एवं जितेंद्रिय राजा तथा नायक भी हुए हैं। दैवज्ञ नरेश सवाई जयसिंह, वाणी-विलास-वैभव के प्रतीक कुंभा, विद्वान एवं विद्वानों के आश्रयदाता विग्रहराज एवं जितेंद्रिय नागरीदास आदि ऐसे भूपति हुए हैं जिनमें कला, कलम एवं कटार का दुर्लभ सामंजस्य दिखाई देता है। वास्तव में यहाँ का इतिहास अद्वितीय, अद्भुत एवं अतुलनीय है। यहाँ राज्यों का उत्थान-पतन भी है तो दरबारी गुटबंदी, गठबंधन, समर्थन एवं दुरभिसंधी भी है। यहाँ ढोला-मारू का प्रेमाख्यान है तो मूमल-महेन्द्र की विरह व्यथा भी है, यहाँ राजपाट त्याग कर जन-जन में भक्ति की अलख जगाने वाले संत पीपा भी हैं तो कृष्ण भक्ति के रस से समस्त उत्तर भारत को प्लावित करने वाली मीरा भी है। यहाँ पृथ्वी के गुरुत्वार्षण सिद्धांत का प्रतिपादन करने वाले संसार के पहले विद्वान ब्रह्मगुप्त भी हैं तथा महाविद्वान महाकवि माघ भी हैं। सच में यह भूमि निराली है। इस प्रदेश के गौरवशाली अतीत की खुशबू से इतिहास के पृष्ठ आज भी महक रहे हैं। महाकवि रामधारी सिंह दिनकर ने भी इतिहास के गौरव को क्या खूब अपनी कविता की पंक्तियों में व्यक्त किया है-

**उस अतीत की गौरव गाथा
छिपी उन्हीं उपकूलों में
कीर्ति-सुरभि वह गमक रही
अब भी तेरे वन-फूलों में॥**

भिलेख

• **बिजलोलिया अभिलेख** : भीलवाड़ा जिले के बिजोलिया गाँव में जैन मन्दिर के समीप एक चट्टान पर खुदा हुआ यह लेख संस्कृत भाषा में है। लेख फरवरी 1170 ई. का है। इससे चौहानों की उपलब्धियाँ ज्ञात होती हैं। इससे कई स्थानों के प्राचीन नाम विदित होते हैं जैसे जालौर का जबालिपुर ए सांभर का शाकंभरी एवं भीनमाल का श्रीमाल आदि।

• **चीरवा का शिलालेख** : उदयपुर से 13 किण्मीण् दूर चीरवा गाँव के मन्दिर के लगा हुआ यह लेख 1273 ई. का है। यह लेख गुहिलवंशीय बापा से रावल समरसिंह के समय तक की उपलब्धियाँ बतलाता है।

• **श्रृंगीरुषि का लेख** : इसमें मेवाड़ के राणा हम्मीर प्रथम से राणा मोकल तक की जानकारी मिलती है। इसमें मेवाड़ की आदिमजाति भीलों के सामाजिक जीवन पर प्रकाश डाला गया है : इससे इसकी विशेषता बढ़ जाती है। इस लेख की रचना 1428 ई. की है। यह एकलिंग जी से 7 किण्मीण् दूर श्रृंगीरुषि नाम स्थान पर लगा हुआ है। मेवाड़ के इतिहास के लिये 1439 ई. की श्रृंगीरुषि प्रशस्ति भी महत्वपूर्ण है जिसमें राणा कुम्भा तक गुहिल.सिसोदिया वंशावली ज्ञात होती है।

• **कुंभलगढ़ का शिलालेख** : इसमें मेवाड़ के शासकों की शुद्ध वंशावली मिलती है। यह पाँच शिलाओं पर उत्कीर्ण किया हुआ है। राणा कुम्भा तक शासकों की उपलब्धियों और समाज का चित्रण उसकी विशेषता है।

• **कीर्तिस्तम्भ प्रशस्ति**: राणा कुम्भा के समय 1460 ई. में उत्कीर्ण की गई यह प्रशस्ति कई शिलाओं पर विद्यमान रही थी। इस समय में मात्र दो शिलाएँ ही शेष हैं। इसके द्वारा 15वीं शताब्दी के राजस्थान सर्वांगीण जीवन का अध्ययन करने में महत्वपूर्ण सहायता मिलती है। राणा कुम्भा रचित अध्ययन करने में महत्वपूर्ण सहायता मिलती है। राणा कुम्भा रचित ग्रन्थों.चण्डीशतक ए गीतगोविन्द ए टीका संगीतराज आदि का उल्लेख भी इसमें है।

• **रायसिंह की प्रशस्ति** : 1594 ई. की बीकानेर के शासक रायसिंह के काल की यह प्रशस्ति बीकानेर दुर्ग के निर्माण सहित रायसिंह की काबुल और कन्धार की उपलब्धि का वर्णन करती है।

• **आमेर का लेख** : आमेर के कछवाह राजवंश के इतिहास को जानने के लिये यह लेख महत्वपूर्ण है। इसमें पृथ्वीराजए भारमलए भगवन्तदास और मानसिंह का उल्लेख है। मानसिंह द्वारा निर्मित जमुआ रामगढ़ के प्रकार वाले दुर्ग का वर्णन इसमें है। इसे 1612 ई. में उत्कीर्ण किया गया था।

• **राज प्रशस्ति** : मेवाड़ के राणा राजसिंह ने राजसमन्द नामक विशाल झील का निर्माण कराया था। तब रणछोड़ भट्ट ने इसके निमित्त इस प्रशस्ति की रचना की थी। यह प्रशस्ति 5 बड़ी.बड़ी काले रंग की पत्थर की पिट्टका पर उत्कीर्ण कर राजसमन्द के तट पर लगाई गई। पत्थर पर खुदी हुई यह ऐतिहासिक.काव्य कृति विश्व के शिलालेखों में सबसे बड़ी है। इसमें संस्कृत भाषा सहित फारसी और स्थानीय शब्दों का प्रयोग भी किया गया है। इस प्रशस्ति द्वारा मेवाड़ के इतिहास का पता लगता है और साथ ही सांस्कृतिक और आर्थिक जीवन को जानने में इसका सर्वाधिक महत्व है। इसकी रचना 1676 ई. में हुई थी।

राजस्थानी

साहित्य

अतीत को जानने के साधनों में साहित्य एक महत्वपूर्ण स्रोत है। जिसे पढ़कर हमें अतीत की आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक स्थिति का ज्ञान होता है। राजस्थान के इतिहास देने वाला साहित्य सभी भाषाओं में उपलब्ध है किंतु हम यहाँ केवल राजस्थानी साहित्य की चर्चा करेंगे। रचनाकारों की दृष्टि से राजस्थानी साहित्य को 5 वर्गों में बांटा गया है -(1) चारण साहित्य (2) जैन साहित्य (3) संत साहित्य (4) ब्राह्मण साहित्य (5) लोक साहित्य।

(1) **चारण** **साहित्य** :-
चारणी-साहित्य से अभिप्राय चारण, ब्रह्मभट्ट, भाट, ढाढी आदि सभी विरुद-गायक जातियों के लेखकों द्वारा लिखा गया साहित्य है। यह साहित्य अधिकांशतः पद्य में हैं और प्रधानतया वीर रसात्मक है। यह साहित्य प्रबंध काव्यों, गीतों, दोहों, सोरठों, झूलणों, छप्पयों आदि छन्दों में उपलब्ध है। वेलि किसन रूकमणी री, रतन महेश दासोत की वचनिका (खिड़ियाँ जग्गा), जइतसी रऊ छन्द (बीटू सूजा) आदि।

(2) **जैन** **साहित्य** :-
जैन मुनियों द्वारा लिखित साहित्य जैन साहित्य के अंतर्गत आता है। वज्रसेन सूरि रचित 'भरतेश्वर बाहुबलि घोर' राजस्थानी का प्राचीनतम ग्रंथ है। यह वीर रस एवं शांत रस का 46 पदों का लघु ग्रंथ है। इसमें भरत और बाहुबलि के बीच युद्ध का वर्णन है। शालि भद्र सूरि कृत 'भरत बाहुबलि रास'

संवतोल्लेख वाली प्रथम राजस्थानी रचना है। यह भारु गुर्जर भाषा में रचित रास परम्परा में सर्वप्रथम और सर्वाधिक पाठ वाला खण्ड काव्य है।

कुवलयमाला

:-

8वीं शताब्दी में जैन साधु उद्योतन सूरि ने जालौर दुर्ग में इस ग्रंथ की रचना की थी। मूलतः यह ग्रंथ प्राकृत भाषा है किंतु इसमें उस समय प्रचलन में रही 16 भाषाओं के नाम दिए जिसमें मरुभाषा भी एक है।

(3)

संत

साहित्य

:-

चारण साहित्य के साथ-साथ संत साहित्य ने राजस्थानी साहित्य का गौरवपूर्ण साहित्य दिया है। राजस्थान के भक्ति आंदोलनों में वैष्णव भक्तों, दादू पंथियों तथा राम स्नेही साधुओं ने विपूल मात्रा में संत साहित्य का सृजन किया। इन संतों ने गद्य की रचना नहीं के बराबर की।

नाभादास :- अग्रदास के शिष्य नाभादास के द्वारा भक्तमाला, अष्टयाम और रामचरित आदि ग्रंथों की रचना की गयी। नाभादास का भक्त माला एक प्रामाणिक ग्रंथ माना जाता है जो वैष्णव भक्तों के जीवन चरित्र पर प्रभाव डालता है।

सुंदर कुंवर :- यह किशनगढ़ के राजा की पुत्री थी। यह वैष्णव भक्त थी। इनके द्वारा रचित ग्रंथ नेह निधि, वृंदावन गोपी महात्म्य, रस पुंज, सार संग्रह आदि सम्मिलित है।

4.

लोक

साहित्य

राजस्थानी साहित्य में सामान्यजन द्वारा प्रचलित लोक शैली में रचे गये अपार थाती विद्यमान है। इसके अंतर्गत लोक गाथाओं, लोक नाट्यों, प्रेमाख्यानों, कहावतों, पहेलियों एवं लोक गीतों के रूप में विद्यमान है। ढोला मारु रा दूहा प्रसिद्ध लोक काव्य है।

5. ब्राह्मण साहित्य- से तात्पर्य, जिसमें धर्मशास्त्र-विषयक ग्रंथ लिखे गये हैं। वैधक, संगीत, ज्योतिष, इतिहास, पुराण, शास्त्र आधारित टीकाएँ इस साहित्य का हिस्सा है।

ब्राह्मण जाति के लिखे ग्रंथ

नरपति नाल्ह का बीसलदेव रासो।

श्रीधर व्यास का रणमल्ल छंद इसमें पाटन के सूबेदार जफर खाँ एवं ईडर के राजा रणमल राठौड़ के मध्य युद्ध का वर्णन है (संवत् 1454)।

अजितोदय - भट्ट जगजीवन।

अजितोदय - भट्ट जगजीवन।
 अमरकाव्य वंशावली - रणछोड़ भट्ट।
 अमरसार - पं. जीवंधर।
 हम्मीर हठ, सुर्जन चरित - चंद्रशेखर (राव सर्जुन का आश्रित)।
 एकलिंग महात्मय - कुंभा।

साहित्य लेखन की शैलियाँ
 ख्यात, वात, वचनिका, दवावैत महाकाव्य, रासो, दूहा, सोरठा, वेलि आदि है किंतु इनमें इतिहास जानने की दृष्टि से ख्यात महत्त्वपूर्ण है।
 ख्यात -

मध्यकालीन राजस्थानी साहित्य में गद्य विधा में इतिहास वृत्त लिखने के लिए ख्यात लेखन किया जाता था। ख्यात शब्द ख्याति शब्द से बना है जिसका अर्थ है वे बातें जो प्रसिद्ध हो चुकी हैं। मुहणोत नैणसी री ख्यात, दयालदास री ख्यात आदि प्रमुख ख्यात हैं।

राजस्थान के प्राचीन इतिहास का प्रारंभ प्रागैतिहासिक काल से ही शुरू हो जाता है। प्रागैतिहासिक काल के कई महत्त्वपूर्ण पुरातात्विक स्थल प्राप्त होते जैसे- **बागोर से प्राचीनतम पशुपालन** के साक्ष्य मिले तथा दर, भरतपुर से प्राचीन चित्रित शैलाश्रय मिली है किंतु यहाँ से कोई लिखित साक्ष्य नहीं मिलते हैं जिसके कारण इनका विस्तृत अध्ययन संभव नहीं हो पाया है। प्राचीनतम साहित्य 6वीं सदी ईस्वी पूर्व से प्राप्त होते हैं जो राजस्थान में जनपद युग का प्रतिनिधित्व करते हैं। यह जनपद चित्तौड़, अलवर, भरतपुर, जयपुर क्षेत्र में विस्तृत थे तथा यह **क्रमशः शिवी, राजन्य, शाल्व एवं मत्स्य** जनपद के नाम से जाने जाते थे। कालांतर में महाजनपद का काल आया जिसमें राजस्थान के दो महत्त्वपूर्ण महाजनपद का वर्णन मिलता है, जो निम्न थे- **शूरसेन एवं कुरु** जो क्रमशः भरतपुर, धौलपुर एवं अलवर क्षेत्र में विस्तृत थे। महाभारत युद्ध के बाद कुरु और यादव जन-पद निर्बल हो गये। महात्मा बुद्ध के समय से अवन्ति राज्य का विस्तार हो रहा था। समूचा पूर्वी राजस्थान तथा मालवा प्रदेश इसके अंतर्गत था। ऐसा लगता है कि शूरसेन और मत्स्य भी किसी न किसी रूप में अवन्ति के प्रभाव क्षेत्र में थे।

327 ई. पू. सिकन्दर के आक्रमण के कारण पंजाब के कई जनों ने उसकी सेना का सामना किया। अपनी सुरक्षा और व्यक्तित्व को बनाए रखने के लिए ये कई कबीले राजस्थान की ओर बढ़े जिनमें मालव, शिवी, अर्जुनायन, योधेय आदि मुख्य थे। इन्होंने क्रमशः टोंक, चित्तौड़, अलवर-भरतपुर तथा बीकानेर पर अपना अधिकार स्थापित कर दिया। मालव जनपद में **श्री सोम** नामक

राजा हुआ जिसने 225 ई. में अपने शत्रुओं को परास्त करने के उपलक्ष में **एकषष्ठी यज्ञ** का आयोजन किया। ऐसा प्रतीत होता है कि समुद्रगुप्त के काल तक वे स्वतंत्र बने रहे।

मौर्य युग में मत्स्य जनपद का भाग मौर्य शासकों के अधीन आ गया था। इस संदर्भ में अशोक का भाबुर शिलालेख अति-महत्वपूर्ण है, जो राजस्थान में मौर्य शासन तथा अशोक के बौद्ध होने की पुष्टि करता है। इसके अतिरिक्त अशोक के उत्तराधिकारी कुणाल के पुत्र सम्प्रति द्वारा बनवाये गये मंदिर इस वंश के प्रभाव की पुष्टि करते हैं। कुमारपाल प्रबंध तथा अन्य जैन ग्रन्थों से अनुमानित है कि चित्तौड़ का किला व एक चित्रांग तालाब मौर्य राजा चित्रांग का बनवाया गया है। चित्तौड़ से कुछ दूर मानसरोवर नामक तालाब पर मौर्यवंशी राजा मान का शिलालेख मिला है। जी.एच. ओझा ने उदयपुर राज्य के इतिहास में लिखा है कि चित्तौड़ का किला मौर्य वंश के राजा चित्रांगद ने बनाया था, जिसे आठवीं शताब्दी में बापा रावल ने मौर्य वंश के अंतिम राजा मान से यह किला छिना था। इसके अतिरिक्त कोटा के कणसवा गाँव से मौर्य राजा धवल का शिलालेख मिला है जो बताता है कि राजस्थान में मौर्य राजाओं एवं उनके सामंतों का प्रभाव रहा होगा।

यवन-शुंग-कुषाण काल- मौर्यों के अवसान के बाद शुंग वंश का उत्थान हुआ था। पंतजलि के महाभाष्य से ज्ञात होता है कि शुंगों ने यवनों से माध्यमिका की रक्षा की थी। ईस्वी पूर्व की दूसरी शती में यवन शासक मिनांडर द्वारा माध्यमिका को विजित किया गया था। नलियासर, बैराठ और नगरी से यवन शासकों के सिक्के मिले हैं। कनिष्क के शिलालेखानुसार राजस्थान के पूर्वी भागों में उसका राज्य था। कुषाण शासकों के सम्पर्क ने राजस्थान के पत्थर और मृण्मय मूर्ति-कला को एक नवीन मोड़ दिया जिसके नमूने अजमेर के नाद की शिव प्रतिमा, साँभर का स्त्री धड़ अश्व तथा अजामुख ह्यग्रीव या अग्नि की मूर्ति अपने आप में कला के अद्वितीय नमूने हैं।

गुप्तकाल- कुषाणों के पतन के उपरान्त प्रयाग और पाटलिपुत्र में गुप्तों का आविर्भाव हुआ जिनमें समुद्रगुप्त और चन्द्रगुप्त द्वितीय बड़े प्रसिद्ध थे। जैसा कि प्रयाग प्रशस्ति से ज्ञात होता है कि समुद्रगुप्त ने यौद्धेय, मालव एवं आभीर जनजातियों को पराजित कर दिया किंतु अपने प्रत्यक्ष नियंत्रण में नहीं लाया उसके स्थान पर सर्वकर्मदान प्रणाम आज्ञाकरण की नीति अधिरोपित की। पश्चिम भारत में शकों का प्रभाव था किंतु जब चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य शक शासक रुद्र सिंह को पराजित करता है तो पश्चिम भारत में भी गुप्तों का आधिपत्य स्थापित हो जाता है। गुप्तों का सीधा अधिकार तो राजस्थान में नहीं दिख पड़ता, परंतु यह निश्चित है कि राजस्थान में गुप्तों का शासन रहा होगा। उपर्युक्त मत की पुष्टि इस तथ्य से होती है कि बयाना (भरतपुर) से गुप्तकालीन सिक्कों का विशाल भण्डार मिला है। गुप्तों का राजस्थान में प्रत्यक्ष शासन नहीं होने की वजह से यहाँ पर कुछ जनजातीय राज्यों की उपस्थिति दिखती है। इन राज्यों में वरीके वंश प्रमुख है। 371 ई. के विजयगढ़ (बयाना) प्रस्तर शिलालेख से विष्णुवर्धन नामक वरीक वंश के राजा का उल्लेख मिलता है, जिसके पिता यशोवर्धन थे। संभवतः ये समुद्र गुप्त के सामंत रहे हों। इसी प्रकार 423 ई. का झालावाड़ से एक शिलालेख मिला है जिससे ज्ञात होता है कि दक्षिण-पूर्वी राजस्थान में औलीकर वंश का शासन था। यह लेख विष्णु वर्मन नामक शासक का है जिसके द्वारा किए गए जनहित कार्यों की जानकारी मिलती है। कुछ विद्वान औलीकर वंश का संबंध वर्धन वंश से भी जोड़ते हैं।

हूण- गुप्तवंशी सम्राट स्कंदगुप्त ने हूणों के आक्रमण से अपने साम्राज्य की रक्षा तो की थी, परंतु इनके आक्रमणों ने इनके साम्राज्य की नींव को जर्जरित कर दिया। हूण राज्य तोरमाण ने 503 ई. में राजपूताना, गुजरात, काठियावाड़ आदि भागों पर अपना आधिपत्य स्थापित कर दिया। तोरमाण के मिहिरकुल का भी राजस्थान के कई भागों पर अधिकार बना रहा। मिहिरकुल ने बड़ौली में शिव मंदिर का निर्माण करवाया था। हूणों ने माध्यमिका पर भी आक्रमण किया था तथा गुहिल नरेश अल्लट द्वारा हूण राजकुमारी हरियादेवी से विवाह किया तथा उस रानी ने हर्षपुर गाँव भी बसाया था। गुप्तों के पतन और हूणों द्वारा अराजकता पैदा करने की स्थिति से लाभ उठाकर मालवा के यशोवर्मन ने 532 ई. के आस-पास मिहिरकुल को परास्त कर हूणों की शक्ति को निर्बल बना दिया। वे अपने अधिकारों को बनाये रखने के लिए यत्र-तत्र कई राजाओं से लड़ते रहते, परन्तु अन्त में उनको यहाँ की लडाकू जातियों जैसे कुनबी कुषकों के साथ विलय के लिए बाध्य होना पड़ा। आबू क्षेत्र में रहने वाला 'कुनबी' या कलबी (Kalbi) समुदाय स्वयं को हूणों का वंशज मानते हैं तथा 'हूण' को उज्जमकर, की तरह उपयोग करते हैं। हूण जाति यहीं पर बस गई थी तथा उसे समाज में स्थान भी दिया गया। जैसे- कान्हड देव प्रबंध में हूणों को राजपूत की 36 शाखाओं में शामिल किया गया है, तथा अल्लट का हरियादेवी से विवाह। यह भी माना जाता है बिजौलिया (विंध्यवली) की स्थापना हूणों ने ही की थी। यशोवर्मन ने राजस्थान में व्यवस्था बनाए रखने हेतु राजस्थानीय (Governor) के रूप में अभयदत्त को नियुक्त किया। इसके प्रभाव क्षेत्र में अरावली पर्वत श्रेणी से नर्बदा नदी तक का प्रदेश सम्मिलित है जिसमें मन्दसौर तथा मध्यमिका भी सम्मिलित थे। कुछ समय के लिए राजस्थान में सुख और शांति स्थापित हो सकी।

परंतु यह शांति क्षणिक थी। **यशोवर्मन** की मृत्यु के बाद पुनः अव्यवस्था का दौर आरम्भ हुआ। इधर तो राजस्थान में यशोवर्मन के अधिकारी, जो राजस्थानीय कहलाते थे, अपने-अपने क्षेत्र में स्वतंत्र होने की चेष्टा कर रहे थे, तो उधर प्राचीन गणतंत्र की बिखरी हुई जातियाँ, जो अलग-अलग समूह में रहती थी, पुनः अपने प्राबल्य के लिए संघर्षोन्मुख हो गयीं। किसी केन्द्रीय शक्ति के अभाव में यहाँ क्षेत्रीय संघर्ष बढ़ा। इस समय उत्तर भारत में प्रमुख शक्ति के रूप में पुष्यभूति वंश का शासक हर्षवर्धन शासन कर रहा था। हर्षवर्धन एवं राजस्थान के संबंधों को लेकर ठोस जानकारी का अभाव है। संभवतः हर्षवर्धन ने भी मौर्य व गुप्तों के शासन राजस्थान पर प्रत्यक्ष नियंत्रण स्थापित न किया हों। किंतु इस समय कई क्षेत्रीय राज्यों की जानकारी मिलती है। इसमें से एक प्राचीन राजपूत जाति है चावड़ा, इस जाति का शासन आबू एवं भीनमाल पर था। इसकी जानकारी रज्जिल के 625 ई. के बसंतगढ़ लेख में मिलती है, इसमें पता चलता है कि आबू प्रदेश पर वर्मलात का शासन था। भीनमाल के रहने वाले कवि माघ के शिशुपाल वध से ज्ञात होता है कि उसके पितामह सुप्रभदेव वर्मलाल के मंत्री थे। इसी प्रकार भीनमाल के अन्य विद्वान ब्रह्मगुप्त ने अपनी पुस्तक ब्रह्मस्फुट सिद्धान्त में 628 ई. व्याघ्रमुख नामक चंपा वंशी राजा का उल्लेख मिलता है। ह्वेनसांग 661 ई. के आसपास भीनमाल आया था तब यहाँ चावड़ों का ही शासन था। अरब आक्रमण से चावड़ों का राज्य कमजोर हो गया और उनके राज्य को प्रतिहारों ने अपने अधिकार में कर लिया। संस्कृत लेखों में चावड़ों के लिए चाप, चापोत्कत, चावोटक आदि नामों को काम में लिया गया है। 914 ई. के धरणीवराह के दानपत्र में शंकर के चाप से उत्पन्न होने के कारण चाप

कहा गया है। सम्भवतः चाप, चापा या चम्पक नाम का इस वंश का इनका कोई आदि पुरुष रहा हो जिसके नाम से इस वंश को चावड़ा वंश कहा गया है। कर्नल टॉड ने इन्हें सीथियन कहा है।

हर्ष की मृत्यु के बाद उत्तर भारत में राजनीतिक अस्थिरता फैल जाती है जिसका लाभ उठाकर कई क्षेत्रीय क्षत्रप स्वयं को स्वतंत्र घोषित कर देते हैं। ऐसी की शक्तियों में से एक थे- गुर्जर-प्रतिहारों ने आठवीं से दसवीं शताब्दी तक राजस्थान ही नहीं अपितु उत्तर भारत के बड़े भू-भाग पर शासन किया और इसी के साथ 'राजपूत युग' नामक एक नवीन युग का सूत्रपात होता है।

हर्ष की मृत्यु के पश्चात् राजस्थान पुनः छोटे-छोटे राज्यों में बँट गया। ये राज्य, राज्य विस्तार की लालसा में आपसी लड़ाईयों में उलझ गए। अब इनकी अलग पहचान राजपूतों के रूप में हुई। अतः सातवीं शताब्दी को राजपूत राज्यों का उदयकाल भी माना जाता है। लेकिन अब हमारे समक्ष यह प्रश्न उपस्थित होता है कि ये राजपूत कौन थे? कहाँ से आए। विभिन्न साहित्यिक एवं पुरातात्विक स्त्रोतों के आधार पर तथा राजपूतों के आचार -व्यवहार एवं संस्कृति का विश्लेषण कर इतिहासकारों ने राजपूत जाति की उत्पत्ति के सम्बंध में विभिन्न मत प्रतिपादित किए हैं।

'**पृथ्वीराजरासों**' के रचनाकार चन्दबरदाई ने राजपूतों की उत्पत्ति के सम्बंध में सर्वप्रथम '**अग्रिकुल से उत्पत्ति**' को मत दिया। नैणसी और सूर्यमल्ल मिश्रण ने इस मत को बढ़ा -चढ़ा कर लिखा। वशिष्ठ मुनि द्वारा अपने यज्ञ की राक्षसों से सुरक्षा करने के लिए आबू के यज्ञकुण्ड से चार राजपूत योद्धा परमार, प्रतिहार, चौहान एवं चालुक्य उत्पन्न किए गए, जिनसे इन राजपूत वंशों का आविर्भाव हुआ। परन्तु आज के वैज्ञानिक युग में यह मत इतिहास के पाठक को संतुष्ट नहीं कर पाता है। राजपूत इतिहास के मर्मज्ञ डॉ. गौरीशंकर हीराचन्द ओझा ने कई साहित्यिक एवं अभिलेखीय प्रमाणों के आधार पर राजपूतों को सूर्यवंशीय एवं चन्द्रवंशीय माना है। कर्नल टॉड और स्मिथ जैसे विदेशी विद्वानों ने राजपूतों को शक और सिथियन जैसी विदेशी जातियों की सन्तान माना। डॉ. भण्डारकर जैसे इतिहासकार ने भी राजपूतों को गुर्जर जाति से उत्पन्न मानकर विदेशी वंशीय उत्पत्ति के मत को दृढ़ता प्रदान की, क्योंकि अनेक विद्वान गूर्जरो को विदेशी मानते हैं। डॉ. भण्डारकर ने कुछ राजपूत वंशों को ब्राह्मणवंशीय भी माना है। बिजौलिया शिलालेख के आधार पर वह **चौहानों को वत्सगोत्रिय ब्राह्मण** मानते हैं। लेकिन डॉ. गौरीशंकर हीराचन्द ओझा और सी.वी. त्रैद्य ने भण्डारकर के इस मत को अस्वीकार कर दिया। इस प्रकार राजपूतों की उत्पत्ति के सम्बंध में कोई सर्वसम्मत मत स्थिर नहीं किया जा सका है। निष्कर्षतः ऐसा कहा जा सकता है कि शक, पहलव, हूण आदि विदेशी जातियों का भारतीय युद्धोपजीवी जातियों में विलीनीकरण हो गया। प्राचीन क्षत्रिय शासकों के अवशेष रूप तथा शासक होने के कारण उन्हें '**राजपुत्र**' कहा जाने लगा और कालान्तर में यही 'राजपूत' राजपूतों के नाम से अभिहित किए गए।

प्रतिहार भारत के इतिहास में प्रसिद्ध गुप्त-साम्राज्य के पतन अर्थात् 550 ई. के लगभग राजस्थान-प्रदेश में यौधेय, आर्जुनायन, मालव, आभीर आदि अद्र्ध स्वतंत्र राज्यों के स्थान पर राजपूत राजतंत्र का उदय होने लगा था। इनमें गुर्जर-प्रतिहार, गुहिल, परमार, चौहान, भाटी, राठौड़ (राष्ट्रकूट), कछवाह आदि मुख्य थे। इनमें भी प्रथमतः गुर्जर-प्रतिहार वंश के हरिश्चन्द्र ने 550 ई. के

लगभग जोधपुर के पास माण्डव्यपुर अथवा मण्डोर में प्रतिहार-शासन की स्थापना की। इसके पौत्र नागभट्ट ने मण्डोर के स्थान पर मेदान्तक अथवा मेड़ता को राजधानी बनाया जहाँ से उसके छोटे पुत्र भोज ने शासन चलाया। नागभट्ट ने 39 ई. में चावड़ा शासक से भीनमाल छीन कर एक अन्य स्वतन्त्र प्रतिहार-वंश के राज्य की स्थापना की। इस राज्य की राजधानी भी कालान्तर जबालीपुर वर्तमान में जालोर स्थानान्तरित हुई थी। इस तरह राजस्थान प्रदेश में प्रतिहार-वंश के दो राजनीतिक-केन्द्र स्थापित हुए जिनमें भीनमाल के प्रतिहार शक्तिशाली थे। इन्होंने सिन्ध की ओर से होने वाले अरबों के आक्रमणों को रोकने में प्रतिरोधक-भूमिका निभाई थी। बगदाद के खलीफा हशाम के सिन्ध के गर्वनर जुनैद और उसके सेनापति अलबिलादूरी के आक्रमणों को रोकने में नागभट्ट ने मेदपाट के गुहिलों तथा अन्य का सहयोग प्राप्त किया था। नागभट्ट के द्वारा लगभग बलोची-प्रान्त की एक मुस्लिम सेना को पराजित करने का उल्लेख भी मिलता है। मिहिरभोज प्रतिहार (836-889) ई. ने भी नवोदित तुर्क शक्ति के आक्रमणों को सफलतापूर्वक रोक कर राजस्थान में शान्ति को बनाये रखी। किन्तु इसके पश्चात् प्रतिहारों की शक्ति शनैः शनैः निर्बल होती गई। इस वंश के अन्तिम शासक कन्नौज के त्रिलोचनपाल को महमूद गजनवी ने 1049 ई. में परास्त कर प्रतिहार राजवंश का अन्त कर दिया था।

प्रतिहारों की सेवाओं को भारतीय इतिहास कभी भुला नहीं सकता। जब अरबों के आक्रमणों से दक्षिणी यूरोप तथा उत्तरी अमरीका कुछ ही वर्षों में अपनी स्वतंत्रता खो बैठे थे, तब प्रतिहारों ने अरबों को भारत भूमि से लगभग बाहर ही रखा। त्रस्त जनता का उद्धार करने तथा शत्रु से समाज की रक्षा करने के कारण ग्वालियर प्रशस्ति में नागभट्ट प्रथम को नारायण कहा गया है। प्रतिहारों ने लगभग सम्पूर्ण मध्य भारत को एक वंश के अधीन लाकर राष्ट्र के एकीकरण का कार्य किया। उत्तरी भारत में मौर्यों, गुप्तों तथा मौखरियों को छोड़कर किसी वंश ने इतने लम्बे काल तक इतने विस्तृत प्रदेश पर शासन नहीं किया।

परमार का शाब्दिक अर्थ शत्रु को मारने वाला होता है। प्रारम्भ में परमारों का शासन आबू के आस-पास के क्षेत्रों तक ही सीमित था। प्रतिहारों की शक्ति के हास के उपरान्त परमारों की राजनीतिक शक्ति में वृद्धि हुई।

आबू के परमार- आबू के परमार वंश का **संस्थापक 'धूमराज'** था, लेकिन इनकी वंशावली उत्पलराज से प्रारम्भ होती है। पड़ौसी होने के कारण आबू के परमारों का गुजरात के शासकों से सतत् संघर्ष चलता रहा। गुजरात के शासक मूलराज सोलंकी से पराजित होने के कारण आबू के शासक धरणीवराह को राष्ट्रकूट धवल का शरणागत होना पड़ा। लेकिन कुछ समय बाद धरणीवराह ने आबू पर पुनः अधिकार कर लिया। उसके बाद महिपाल का 1002 ई. में आबू पर अधिकार प्रमाणित होता है। इस समय तक परमारों ने गुजरात के सोलंकियों की अधीनता स्वीकार कर ली। महिपाल के पुत्र धंधुक ने सोलंकियों की अधीनता से मुक्त होने का प्रयास किया। फलतः आबू पर सोलंकी शासक भीमदेव ने आक्रमण किया। धंधुक आबू छोड़कर धार के शासक भोज के पास चला गया। भीमदेव ने **विमलशाह** को आबू का प्रशासक नियुक्त किया। विमलशाह ने भीमदेव व धंधुक के मध्य पुनः मेल करवा दिया। उसने 1031 ई. में आबू में 'आदिनाथ' के भव्य

मंदिर का भी निर्माण करवाया। धंधुक की विधवा पुत्री ने बसन्तगढ़ में सूर्यमंदिर का निर्माण करवाया व सरस्वती बावड़ी का जीर्णोद्धार करवाया।

कृष्णदेव के शासनकाल में 1060 ई. में परमारों और सोलंकियों के सम्बन्ध पुनः बिगड़ गए, लेकिन नाडौल के चौहान शासक बालाप्रसाद ने इनमें पुनः मित्रता करवाई। कृष्णदेव के पौत्र विक्रमदेव ने महामण्डलेश्वर की उपाधि धारण की। विक्रमदेव का **प्रपौत्रधारावर्ष** (1163-1219 ई.) आबू के परमारों का शक्तिशाली शासक था। इसने मोहम्मद गौरी के विरुद्ध युद्ध में गुजरात की सेना का सेनापतित्व किया। वह गुजरात के चार सोलंकी शासकों कुमारपाल, अजयपाल, मूलराज व भीमदेव द्वितीय का समकालीन था। उसने सोलंकियों की अधीनता का जुआ उतार फेंका। उसने नाडौल के चौहानों से भी अच्छे सम्बन्ध रखे। अचलेश्वर के मन्दाकिनी कुण्ड पर बनी हुई धारावर्ष की मूर्ति और आर-पार छिद्रित तीन भैंसे उसके पराक्रम की कहानी कहते हैं। '**कीर्ति कौमूदी**' नामक ग्रंथ का रचयिता सोमेश्वर धारावर्ष का कवि था। उसके पुत्र सोमसिंह के शासनकाल में तेजपाल ने आबू के देलवाड़ा गाँव में 'लूणवसही' नामक नेमिनाथ का मंदिर अपने पुत्र लूणवसही व पत्नी अनुपमादेवी के श्रेयार्थ बनवाया। इसके पश्चात् प्रतापसिंह और विक्रम सिंह आबू के शासक बने। 1311 ई. के लगभग नाडौल के चौहान शासक राव लूम्बा ने परमारों की राजधानी चन्द्रावती पर अधिकार कर लिया और वहाँ चौहान प्रभुत्व की स्थापना कर दी।

मालवा के परमार- मालवा के परमारों का मूल **उत्पत्ति** स्थान भी आबू था। इनकी **राजधानी उज्जैन** या धारानगरी रही, मगर राजस्थान के कई भू-भाग-कोटा राज्य का दक्षिणी भाग, झालावाड़, वागड़, प्रतापगढ़ का पूर्वी भाग आदि इनके अधिकार में थे। मालवा के परमारों का शक्तिशाली शासक **मुंज** हुआ, वाक्पतिराज, अमोघ-वर्ष उत्पलराज, पृथ्वीवल्लभ, श्रीवल्लभ आदि उसके विरुद्ध थे। मेवाड़ के शासक शक्तिकुमार के शासनकाल में उसने आहड़ को नष्ट किया और चित्तौड़ पर अधिकार कर लिया। उसने चालुक्य शासक तैलप द्वितीय को छः बार परास्त किया, मगर सातवीं बार उससे पराजित हुआ और मारा गया। **राजा मुंजको 'कवि वृष'** भी कहा जाता था। 'नवसहस्रं चरित' का रचयिता पद्मगुप्त और 'अभिधानमाला' का रचयिता हलायुध उसके दरबार की शोभा बढ़ाते थे।

मुंज के बाद सिन्धुराज और भोज प्रसिद्ध परमार शासक हुए। भोज अपनी विजयों और विद्यानुराग के लिए प्रसिद्ध था। भोज ने सरस्वती कण्ठाभरण, राजमृगांक, विद्वज्जनमण्डल, समरांगण, शृंगार मंजरी कथा, कूर्मशतक आदि ग्रंथ लिखे। चित्तौड़ में उसने 'त्रिभुवन नारायण' का प्रसिद्ध शिव मंदिर बनवाया, जो मोकल मंदिर के नाम से भी जाना जाता है, (1429 ई. में राणा मोकल द्वारा जीर्णोद्धार के कारण)। कुम्भलगढ़ प्रशस्ति के अनुसार नागदा में भोजसर का निर्माण भी परमार भोज द्वारा करवाया गया। उसने सरस्वती कण्ठाभरण नामक पाठशाला बनवाई। वल्लभ, मेरूतुंग, वररूचि, सुबन्धु, अमर, राजशेखर, माघ, धनपाल, मानतुंग आदि विद्वान उसके दरबार में थे।

भोज का उत्तराधिकारी जयसिंह भी एक योग्य शासक था। वागड़ का राजा मण्डलीक उसका सामन्त था। 1135 ई. के लगभग मालवा पर चालुक्य शासक सिद्धराज ने अधिकार कर लिया और

परमारों की शक्ति हासोन्मुख हो गई। तेरहवीं शताब्दी में अर्जुन वर्मा के समय मालवा पर पुनः परमारों का आधिपत्य स्थापित हुआ। मगर यह अल्पकालीन रहा। खिलजियों के आक्रमण ने मालवा के वैभव को नष्ट कर दिया और परमार भाग कर अजमेर चले गए।

वागड़ के परमार- वागड़ के परमार मालवा के परमार कृष्णराज के दूसरे पुत्र **डम्बरसिंह** के वंशज थे। इनके अधिकार में डूंगरपुर-बाँसवाड़ा का राज्य था, जिसे वागड़ कहते थे। **अर्थूणा** इनकी राजधानी थी। धनिक, कंकदेव, सत्यराज, चामुण्डराज, विजयराज आदि इस वंश के शासक हुए। चामुण्डराज ने 1079 ई. में अर्थूणा में मण्डलेश्वर मंदिर का निर्माण करवाया। 1179 ई. में गुहिल शासक सामन्तसिंह ने परमारों से वागड़ छीन कर वहाँ गुहिल वंश का शासन स्थापित कर दिया। अर्थूणा के ध्वस्त खण्डहर आज भी परमार काल की कला और समृद्धि की कहानी बयां करते हैं।

राजस्थान में चौहानों के मूल स्थान सांभर के आसपास वाला क्षेत्र माना जाता था, इस क्षेत्र को सपादलक्ष के नाम से जानते थे, प्रारम्भिक चौहान राजाओं की राजधानी **अहिच्छत्रपुर** (हर्षनाथ की प्रशस्ति) थी जिसे वर्तमान में नागौर के नाम से जानते हैं। चौहानों की उत्पत्ति का कोई एक सर्वमान्य मत नहीं है, चन्दबरदाई के पृथ्वीराजरासो में चौहानों की उत्पत्ति **अग्रिकुण्ड** से बताई गई, इसके अनुसार आबु में गुरू वशिष्ठ द्वारा जो यज्ञ किया गया इस यज्ञ में चौथे यौद्धा के रूप में चौहानों की उत्पत्ति हुई। इतिहासकार कर्नल जेम्स टॉड ने चौहानों को मध्य एशिया का स्वीकार करते हुए इन्हे विदेशी माना है, राजस्थान के प्रसिद्ध इतिहासकार ओझा व नयनचन्द्र सूरी ने चौहानों को सूर्यवंशी बताया वही डॉ. दशरथ शर्मा ने बिजौलिया से प्राप्त शिलालेख के आधार पर चौहानों को ब्राह्मण बताया।

अनेक इतिहासकार राजस्थान में चौहानों को प्रारम्भिक राज्य पुष्कर के रूप में स्वीकार करते हैं, बिजौलिया के शिलालेख से ज्ञात होता है कि चौहानों का प्रारम्भिक शासक वासुदेव इसे ही चौहानों का संस्थापक या आदि पुरुष कहते हैं। वासुदेव चौहान ने ही सांभर झील का निर्माण कराया था। वासुदेव के उत्तराधिकारी "**गुवक प्रथम**" ने सीकर में **हर्षनाथ मंदिर** को निर्माण कराया इस मंदिर में भगवान शंकर की प्रतिमा विराजमान है, जिन्हें श्रीहर्ष के रूप में पूजा जाता है।

गुवक प्रथम के बाद गंगा के उपनाम से विग्रहराज द्वितीय को जाना जाता है सर्वप्रथम विग्रहराज द्वितीय ने भरूच (गुजरात) के चालुक्य शासक मूलराज प्रथम को पराजित किया तथा भरूच गुजरात में ही **आशापुरा देवी** के मंदिर का निर्माण कराया इस कारण विग्रहराज द्वितीय को मतंगा शासक कहा गया इस शासक की जानकारी का एकमात्र स्त्रोत सीकर से प्राप्त हर्षनाथ का शिलालेख है, जो संभवतयः 973ई. का है।

अजयराज -

पृथ्वीराज प्रथम के पुत्र का नाम अजयराज था। अजयराज को चाँदी के सिक्कों पर अजयदेव के रूप में प्रदर्शित किया गया था, अजयराज की **रानी सोमलेखा** के भी हमें सिक्के प्राप्त हुए हैं,

इससे ज्ञात होता है कि सोमलेखा ने भी अपने नाम के चाँदी के सिक्के चलवाए। अजयराज ने 1113ई. में अजयमेरू दुर्ग का निर्माण कराया तथा अजमेर को अपनी राजधानी के रूप में स्वीकार किया मेवाड़ के शासक पृथ्वीराज ने अपनी रानी तारा के नाम पर अजयमेरू दुर्ग का नाम तारागढ़ दुर्ग रखा बाद में यही **अजयमेरू/तारागढ़/गढ़बीठली** के रूप में जाना जाने लगा अजयराज ने इस दुर्ग का निर्माण अजमेर की बीठली पहाड़ी पर कराया था जिसे कारण इसे गढ़बीठली कहा गया। अजयराज की उपलब्धि यह थी कि इसने चौहानों को एक संगठित भू-भाग प्रदान किया जिसे अजमेर के नाम से जाना गया है।

अर्णाराज (आनाजी) -

चौहान शासकों में अर्णाराज एक महत्वपूर्ण शासक था, इस शासक ने सर्वप्रथम तुर्कों को पराजित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, तुर्कों पर विजय के उपलक्ष्य में अर्णाराज ने अजमेर शहर के बीचों-बीच अनासागर झील का निर्माण कराया था। जयानक ने अपने ग्रन्थ पृथ्वीराज विजय में लिखा है कि "अजमेर को तुर्कों के रक्त से शुद्ध करने के लिए **आनासागर झील** का निर्माण कराया था" क्योंकि इस विजय में तुर्का का अपार खून बहा था।

अर्णाराज ने पुष्कर में **वराह मंदिर** का निर्माण करवाया था। गुजरात के चालुक्य शासक कुमारपाल ने अर्णाराज पर आक्रमण किया लेकिन इस आक्रमण को अर्णाराज ने विफल कर दिया यह जानकारी हमें मेरूतुंग के प्रबंध चिन्तामणि नामक ग्रन्थ से मिलती है।

विग्रहराज चतुर्थ (1158-1163 ई.)

चौहानों के इतिहास में एक महत्वपूर्ण शासक विग्रहराज चतुर्थ हुआ जिसे बीसलदेव के नाम से जानते थे, इसका शासकाल चौहान शासकों का स्वर्णकाल था।

विग्रहराज चतुर्थ 1153 ई. में अजमेर के सिंहासन पर बैठा तथा सर्वप्रथम विग्रहराज ने तोमारों को परास्त कर दिल्ली के आसपास वाले भू-भाग पर अधिकार किया इस प्रकार चौहानों के हाथ में पहली बार दिल्ली का राज्य आया, इस कारण विग्रहराज चतुर्थ को '**कटिबंधु**' के नाम से भी जाना जाता था। इसे कवि बाधव के नाम से भी जाना जाता है।

चौहानों में बीसलदेव सबसे अधिक साहित्य प्रेमी विद्वान था, स्वयं लेखन कार्य में रूचि रखता था तथा अनेक विद्वानों ने इसके शासनकाल में अनेक ग्रंथों की रचना भी कि विग्रहराज ने हरिकेली नामक नाटक की रचना की इसी प्रकार सोमदेव नामक कवि ने ललित विग्रहराज, ललित विस्तार नामक ग्रन्थ की रचना की। बीसलदेव के दरबार में ही नरपति नाल्ह ने '**बीसलदेव रासो**' ग्रन्थ में चौहानों की उपलब्धियों का वर्णन किया गया।

विग्रहराज ने संस्कृत को महत्व देते हुए अजमेर में संस्कृत पाठशाला एवं संस्कृत मंदिर की स्थापना की, लेकिन दिल्ली के सुल्तान कुतुबुद्दीन ऐबक ने जब अजमेर पर आक्रमण किया इस समय ऐबक ने इस मंदिर व पाठशाला को ध्वस्त कर एक मस्जिद का निर्माण करवाया जिसे **ढाई दिन के झोपड़े** के नाम से जाना जाता है, इसी मस्जिद प वर्तमान में सूफी संत पंजाबशाह का उर्स आयोजित होता है।

विग्रहराज ने अजमेर के निकट बीसलसर झील का निर्माण कराया तथा अपने ही नाम पर बीसलपुर कस्बा भी बसाया। चौहानों में विग्रहराज चतुर्थ बीसलदेव प्रथम शासक था जिसने पशु हत्या पर प्रतिबंध लगाया था।

पृथ्वीराज चौहान (1122-1192 ई. तक)

विग्रहराज के पश्चात् उसके पुत्र पृथ्वीराज द्वितीय ने 1161 से 1169 ई. तक शासन किया इसके निःसंतान होने के कारण अर्णोराज के सबसे छोटे पुत्र सोमेश्वर को गद्दी पर (1169-1177 ई.) बिठाया गया। **सोमेश्वर** का विवाह त्रिपुरी के राजा अचल की पुत्री **कर्पूरीदेवी** से हुआ था। इससे दो पुत्र- पृथ्वीराज और हरिराज हुए। 1177 ई. में सोमेश्वर की मृत्यु के बाद उसका पुत्र पृथ्वीराज तृतीय 11 वर्ष की अल्पायु में शाकम्भरी का शासक बना।

पृथ्वीराज के प्रारम्भिक जीवन में इसकी माँ कर्पूरीदेवी ने शासन का संचालन किया इस समय शासन संचालन के लिए **सेनापति भुवनमल तथा प्रधानमंत्री कदम्बास (केमास)** का महत्वपूर्ण योगदान रहा। पृथ्वीराज ने बहुत जल्द अपने राज्य के संगठित कर अपने शत्रुओं पर विजयप्राप्त की। सबसे पहले पृथ्वीराज ने अपने चचेरे भाई नागार्जुन के विद्रोह का दमन किया। ठीक इसी प्रकार सतलज प्रदेश की जाति भण्डानकों के आतंक का समापन किया। सिंध के मार्ग से आकर दिल्ली, अलवर व भरतपुर के क्षेत्र पर आतंक मचाते थे इस प्रकार अपने राज्यों को सुरक्षित करने के लिए पृथ्वीराज ने इस जाति से संघर्ष किया।

पृथ्वीराज महोबा के चन्देल राजाओं पर भी विजय प्राप्त की महोबा के शासक परमरदीदेव तथा इसके योग्य सेनापति आल्हा ऊदल ने पृथ्वीराज चौहान के विरुद्ध इस युद्ध में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई इस युद्ध में परमरदीदेव मारे गए बाद में आला उदल पृथ्वीराज चौहान के सेना में चले गए। इतिहासकार डॉ. दशरथ शर्मा एमएस त्रिपाठी द्वारा रचित ग्रन्थ यह बताया गया कि जब पृथ्वीराज चौहान ने जयचन्द की पुत्री संयोगिता का अपहरण किया उस समय पृथ्वीराज चौहान के लिए आल्हा ऊदल की भूमिका महत्वपूर्ण रही।

पृथ्वीराज चौहान व मुहम्मद गौरी के बीच 1191 ई. में **तराइन का प्रथम युद्ध** हुआ इस युद्ध में पृथ्वीराज ने गौरी की सेना को पराजित किया तथा गौरी हिन्दुस्तान से खदेड़ दिया, लेकिन पृथ्वीराज ने गौरी को जीवित छोड़कर बहुत बड़ी गलती की जिसका लाभ गौरी ने 1192 ई के **तराइन के द्वितीय युद्ध** में उठाया इस युद्ध में गौरी ने पृथ्वीराज को पराजित किया। माना जाता है कि पृथ्वीराज तथा इसके दरबारी कवि चन्द्रबरदायी को बन्दी बनाकर अपने देश ले गया, जहाँ दोनों की हत्या कर दी, लेकिन इस तथ्यों पर विश्वास नहीं किया जा सकता।

जालौर के चौहान

जालौर को प्राचीनकाल में **जाबलीपुर** तथा जालौर के किले को स्वर्णगिरी या सोनगढ़ कहा जाता है, इसी कारण जालौर का चौहान राजवंश **सोनगरा चौहान** कहलाते हैं। जालौर शब्द की

उत्पति जाल+लार से हुई जाल एक वृक्ष का नाम तथा लौर सीमा अतः जाल के वृक्षों की सीमा वाला क्षेत्र जालौर कहा गया।

इस वंश का **संस्थापक कीर्तिपाल** था जिसमें परमारों से सिवाणा व जालौर को जीता। इस शाखा का प्रसिद्ध शासक कान्हड़देव चौहान था। दिल्ली के सुल्तान अलाउद्दीन खिलजी ने जालौर को जीतने से पूर्व 1308 में सिवाना पर आक्रमण किया। उस समय चौहानों के एक सरदार जिसका नाम **सातलदेव** था, दुर्ग का रक्षक था। उसने अनेक स्थानों पर तुर्कों को छकाया था। इसलिए उसके शौर्य की धाक राजस्थान में जम चुकी थी। परन्तु एक राजद्रोही भावले नामक सैनिक द्वारा विश्वासघात करने के कारण सिवाना का पतन हो गया और अलाउद्दीन खिलजी ने सिवाना जीतकर उसका नाम खैराबाद रख दिया। इस विजय के पश्चात् 1311 में जालौर दुर्ग पर आक्रमण का दायित्व **कमालुद्दीन गुर्ग** को सौंपा था। कान्हड़देव के सामन्त दहया राजपुत बीका के विश्वासघात ने कान्हड़देव को पराजय की ओर धकेल दिया था इसी बीच कान्हड़देव शौर्यपूर्ण लड़ते हुए वीर गति को प्राप्त हुआ। अलाउद्दीन खिलजी ने यहाँ मस्जिद का निर्माण किया एवं इसका नाम **जलालाबाद** रखा। कान्हड़देव शूरवीर योद्धा, देशाभिमानी तथा चरित्रवान व्यक्ति था। उसने अपने अदम्य साहस तथा सूझबूझ से किल निवासियों, सामन्तों तथा राजपूत जाति का नेतृत्व कर एक अपूर्व ख्याति अर्जित की थी। कान्हड़देव के भाई मालदेव ने अलाउद्दीन खिलजी की अधिनता स्वीकार कर ली थी।

रणथम्भौर के चौहान

वंश कि स्थापना पृथ्वीराज चौहान के पुत्र गोविन्द राज ने की थी। यहाँ के प्रतिभा सम्पन्न शासकों में **हम्मीर** का नाम सर्वोपरि है। दिल्ली के सुल्तान जलालुद्दीन खिलजी ने हम्मीर के समय रणथम्भौर पर आक्रमण किया। अलाउद्दीन खिलजी ने भी 1301 में रणथम्भौर पर आक्रमण किया। इसका मुख्य कारण हम्मीर द्वारा अलाउद्दीन खिलजी के विरुद्ध मंगोल शरणार्थियों को आश्रय देना था। किला न जीत पाने के कारण अलाउद्दीन ने हम्मीर के सेनानायक **रणमल और रतिपाल** को लालच देकर अपनी ओर मिला लिया। हम्मीर ने आगे बढ़कर शत्रु सेना का सामना किया, पर वह वीरगति को प्राप्त हुआ। हम्मीर की **रानी रंगदेवी ने जौहर किया और उसकी पुत्री देवलदेवी ने जलजौहर कर अपने धर्म की रक्षा की। यह राजस्थान का प्रथम हौहर माना जाता है। हम्मीर के साथ ही रणथम्भौर के चौहानों का राज्य समाप्त हो गया। हम्मीर के बारे में प्रसिद्ध है-**

सिंघ गमन, सत्पुरुष वचन, कदली फलै इक बार।

तिरिया तेल, हम्मीर हठ, चढ़ै न दूजी बार।।

- मुहणोत नैणसी अपने ग्रंथ नैणसी री ख्यात में राठौड़ों को कन्नौज के गहड़वाल वंश का वंशज बताया, इनका मानना था कि इस वंश के अंतिम शासक जयचन्द के वंशजों ने अपना राज्य पश्चिम राजस्थान में स्थापित कर लिया इस मत का समर्थन दयालदास री ख्यात एवं पृथ्वीराजरासों में भी मिलता है।
- राठौड़ों के कुल पुरुष गहड़वाल शासक जयचंद के **पौत्र राव सीहा थे।** राव सीहा की मृत्यु के बाद उनके पुत्र राव आसथाना शासक बने। जलालुद्दीन खिलजी के आक्रमण के भय के कारण

अपना केंद्र गूंदौज को बनाया। आसथाना जी के बाद के शासकों में वीरमदेव जी के पुत्र चूंडा राठौड़ वंश के सफल व प्रतापी शासक थे। वीरमदेव जी मल्लीनाथ जी के भाई थे। राव चूंडा ने अपनी पुत्री हंसाबाई का विवाह मेवाड़ के राणा लाखा के साथ कर अपनी स्थिति को मजबूत किया।

- रणमल के अत्यधिक हस्तक्षेप के कारण कुंभा के सरदारों ने 1438 ई. में रणमल की हत्या कर दी जोधा ने भागकर मारवाड़ में शरण ली। हंसाबाई के प्रभाव से कुंभा व जोधा के मध्य **आँवल-भाँवल** की संधि हुई। जोधा ने अपनी पुत्री का शृंगारदेवी का विवाह कुंभा के पुत्र रायमल से कर अपनी स्थिति को मजबूत किया। बाँवल (बबूल) के पेड़वाली पृथ्वी जोधाजी को सौंप दी गई और आँवल वाली जमीन महाराणा के अधिकार में रही।
- **जोधरा ने 12 मई 1459 को आधुनिक जोधपुर शहर की स्थापना की** तथा चिडियाटूँक पहाड़ी पर मयूर की आकृति में मेहरानगढ़ दुर्ग का निर्माण किया। मँडोर में चामुंडा की मूर्ति को मँगाकर जोधपुर के किले में स्थापित किया।
- मारवाड़ में सामन्तवाद का वास्तविक संस्थापक राव जोधा को माना जाता है। जिसका उल्लेख टॉड ने अपने ग्रंथ में भी किया है। सामन्तवादी व्यवस्था का उल्लेख गंगाधर शिलालेख झालावाड़ में मिलता है।
 - राव जोधा की रानी जसमोद ने जोधपुर में रानीसर झील का निर्माण कराया।

शासकों का शासन क्रम

जोधरा (1453-1489) ® सातलजी (1489-1492) ® सूजा जी (1492 -1515)

• राव गांगदेव (1515-1531)

खानवा के युद्ध में सांगा की सहायता हेतु सेना भेजी थी।

- जोधपुर शहर में गाँगेलाव तालाब व “गाँगा की बावड़ी” का निर्माण करवाया।
- राव गांग अफीम का अत्यधिक शौकीन था, अफीम की पिन्क में महल की खिड़की में बैठा शीतल वायु का सेवन कर रहा था कि झपकी आ गई और गिरने से मृत्यु हो गई। वीर विनोद व दयालदास की ख्यात में मालदेव द्वारा हत्या करना कहाँ गया है।

राव मालदेव (1532-1568)

- फारसी इतिहासकारों ने मालदेव को हिंदुस्तान का ‘हशमत वाला शासक कहा’ है इसे हिन्दू बादशाह भी कहा जाता है। सिंहासन पर बैठते मालदेव ने सर्वप्रथम भ्रदाजून पर अधिकार किया तथा मालदेव का राज्याभिषेक सोजत के किले में हुआ।
- मेड़ता के वीरमदेव व मालदेव के मध्य वैमनस्य का कारण दरियाजोश नामक हाथी था जिसे मालदेव प्राप्त करना चाहता था। मालदेव ने मेड़ता पर अधिकार कर लिया तथा वीरमदेव शेरशाह की शरण में चला गया।

- 1541 ई. में बीकानेर के शासक राव जैतसी व मालदेव के मध्य **पाहेबा का युद्ध** हुआ। राव जैतसी मारा गया तथा उसके पुत्र कल्याणमल ने शेरशाह के दरबार में शरण ली। इस युद्ध में मालदेव का सेनापति कूपा था जिसे बीकानेर का प्रशासक बनाया।
- 1536 ई. में जैसलमेर के रावल लूणकरण की पुत्री उमादे से मालदेव का विवाह हुआ जो इतिहास में **रूठी रानी** के नाम से प्रसिद्ध है। उमादे ने अपना जीवन दत्तक पुत्र राम के पास रहकर गुंदोज में गुजारा और वहीं सती भी हो गई।
- **गिरी-सुमेल/ जैतारण का युद्ध (1544)**- शेरशाह व मालदेव के मध्य हुआ। मालदेव की सेना का नेतृत्व जैता-गोविंद (कूपा) के हाथों में था जबकि शेरशाह का सेनापति जलाल खाँ जगवानी था। शेरशाह चालाकी से युद्ध में विजयी रहता है तथा जैता-कूपा युद्ध में मारे गये।
- तारिखे फरिश्ता व मुन्तखुबउल्लुबाब में मिलता है कि शेरशाह ने विजयी होकर कहाँ था कि- **“खुदा का शुक्र है कि किसी तरह फतह हासिल हो गई, वरना मैंने एक मुट्ठी भर बाज रे के लिए हिंदुस्तान की बादशाहत ही खोई थी।”**
- शेरशाह जोधपुर का प्रशासन खवास खाँ को सौंप देता है तथा मालदेव ने सिवाणा दुर्ग में शरण ली थी।
 - मालदेव ने जोधपुर शहर व दुर्ग का परकोटा बनाया।
 - मालदेव के काल में जैन विद्वान नरसेन ने जिन रात्री कथा की रचना की थी।
- मालदेव ने मेड़ता के दुर्ग का निर्माण कराया जिसे मालकोट का दुर्ग भी कहते हैं, इसी के साथ पोकरण व सोजत के दुर्ग का भी निर्माण करवाया था।

राव चन्द्रसेन (1562-1581)

- इसे **भूला-बिसरा राजा, मारवाड़ का प्रताप तथा प्रताप का अग्रगामी** कहते हैं। चन्द्रसेन 1570 ई. के नागौर दरबार में उपस्थित हुआ किंतु अपने भाइयों को देख वहाँ से निकल गया। मालदेव के बाद चन्द्रसेन गद्दी पर बैठा इससे उसके भाइयों में बैर हो गया राव रामसिंह की प्रार्थना पर अकबर ने 1563 ई. में हुसैन कुली खाँ का भेज जोधपुर पर अधिकार कर लिया। चन्द्रसेन ने भद्राजून में शरण ली किंतु वहाँ भी अकबर का अधिकार हो जाने के बाद सिवाणा में शरण ली।
- नागौर दरबार के बाद अकबर ने बीकानेर के रायसिंह को जोधपुर का प्रशासक बनाया।
- 1581 ई. में चन्द्रसेन की मृत्यु के बाद तीन साल के लिए जोधपुर को खालसे में शामिल कर लिया था।

मोटा राजा उदयसिंह (1583-1595 ई.)

- **मारवाड़ का प्रथम शासक जिसने बादशाही मनसब स्वीकार की।** अकबर ने इसे 1000 की मनसब तथा राजा की पदवी दी। 1586 ई. में उसने अपनी पुत्री जगत गोसाई का विवाह

सलीम से किया जिसमें खुर्रम हुआ। जोधपुर की राजकुमारी होने के कारण इसे जोधाबाई भी पुकारा जाता है।

- उदयसिंह ने बादशाही सेना के साथ मिलकर सिवाणा के शासक रायमलोत कल्ला पर आक्रमण किया और सिवाणा का दूसरा शाका हुआ।

सूरसिंह (1595-1619)

- उदयसिंह की दमे की बीमारी से लाहौर में मृत्यु हो गई अतः वहीं पर सूरसिंह को अकबर ने राजा की पदवी देकर मारवाड़ का उत्तराधिकारी बनाया।
- अकबर ने सूरसिंह की मलिक अंबर की विरूद्ध वीरता पूर्वक लड़ने पर 'सवाई राजा' की पदवी दी।
- मेवाड़ अभियान में खुर्रम की सहायता करने पर सूरसिंह को 5000 जात व 3000 सवार का मनसब दिया गया।

गजसिंह (1619-1638)

- राजतिलक बहरानुपर में हुआ। मलिक अम्बर को परास्त करने पर इसे 4000 का मनसब व जहाँगीर ने दलथंभन (शत्रु को रोकने वाला) की उपाधि दी। बाद में मनसब 5000 कर दी गई।
 - खुर्रम (शाहजहाँ) ने गजसिंह की बहन मनभावती से शादी की थी।
- गजसिंह ने पासवान अनारा बेगम के प्रभाव में आकर अमरसिंह राठौड़ के स्थान पर जसवंत सिंह प्रथम को उत्तराधिकारी बनाया।
- इसी अमरसिंह व बीकानेर के कर्णसिंह के मध्य 1644 ई. में **मतीरे की राड़** नामक युद्ध होता जिसमें अमरसिंह विजय होता है तथा इसी अमरसिंह ने ही शाहजहाँ के दरबार में मीर बहशी सलावत खाँ का वध कर दिया था। नागौर में इसकी 12 खंभों की छतरी बनी हुई है।

जसवंतसिंह (1638-1678)

- **जन्म – 1626 बुरहानपुर में।**
 - **पिता – गजसिंह**
 - **माता– सीसोदणी प्रताप दे अथवा रूकमावती।**
 - शाहजहा ने इसे राजा एवं कालांतर में महाराज की पदवी दी।
- जसवन्त सिंह ने अमरसिंह की पुत्री का विवाह दारा शिकोह से करवाया तथा धरमत के युद्ध में दारा शिकोह की ओर से लड़ा। जयसिंह के कहने पर औरंगजेब ने जसवन्त सिंह को माफ कर दिया तथा 7000 की मनसब एवं गुजरात का सुबेदार बनाया।
- जसवन्त सिंह ने औरंगाबाद के निकट **जसवंतपुरा नामक** नगर बसाया तथा इसी के पास जसवंत सागर तालाब बनवाया।

- इसकी हाडी रानी कर्मावती (हाडा-शत्रुशाल की पुत्री) ने जोधपुर नगर से बाहर राई का बाग बनवाया।
- जसवंत सिंह डिंगल भाषा के अच्छे कवि थे। भाषा भूषण नामक ग्रंथ की रचना की अन्य प्रमुख रचना में आनंद विलास, सिद्धांत बोध सिद्धांत सार तथा गीता महात्म्य प्रमुख है।
- मुहणौत नैणसी इन्हीं के दरबार में था, जिसे राजस्थान का अबुल फजल कहा जाता है। अशिकन ने मारवाड़ रे परगना री विगत को राजस्थान का गजेटीयर कहा है।
- नैणसी जसवंतसिंह का दीवान था, लेकिन जसवंतसिंह ने इन पर धन गबन का आरोप लगाया जिसके कारण नैणसी ने 1670 ई. में आत्महत्या कर ली।
 - जसवंतसिंह की मृत्यु 1678 में जमरूद में हुई। इनकी मृत्यु पर औरंगजेब ने कहा था “**आज कुफ्र का दरवाजा टूट गया** औरंगजेब ने जसवंतसिंह को धर्म विरोधी विचारधारा के कारण कुफ्र के नाम से संबोधित किया था।
 - रूपा धाय का संबंध जसवंतसिंह से है।

अजित सिंह (1678-1724 ई.)

- **जन्म**— लाहौर में, अजित सिंह के जन्म से पूर्व ही जसवंतसिंह का देहांत हो चुका था और मारवाड़ को मुगल साम्राज्य में मिलाया जा चुका था।
- औरंगजेब ने अजित सिंह व उसकी माँ को दिल्ली में कैद कर रखा था। जोधपुर पर मुगल सेना का अधिकार था ऐसी स्थिति में दुर्गादास राठौड़ ने महाराजा अजितसिंह को दिल्ली दरबार से बाहर निकलाने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।
 - दुर्गादास जसवंत सिंह के मंत्री आसकरण का पुत्र था।
- अजितसिंह की माता राजसिंह की भतीजी थी अतः राजसिंह ने अजितसिंह की सहायता की उसे 12 गाँवों का पट्टा दिया तथा केलवा का जागीरदार बना दिया।
- औरंगजेब ने मारवाड़ का टीका अमरसिंह के पौत्र इंद्रसिंह को 36 लाख रू. के बदले दे दिया।
- चांदावत सरदार मोहकमसिंह की स्त्री बाघेली अपनी दूध पिती कन्या को अजितसिंह की धाय के पास छोड़कर स्वयं अजितसिंह को लेकर मारवाड़ की तरफ निकल गई। अजित सिंह को **कालिंदी के जयदेव** नामक पुष्करणा ब्राह्मण के पास छोड़ा गया। खिंची मुकुंददास भी संन्यासी का वेश धरकर पास में ही बस गया। औरंगजेब ने अन्य बालक को वास्तविक राजकुमार समझ कर उसका नाम ‘**मोहम्मदरीराज**’ रख दिया।
- औरंगजेब के आदेश पर शहजादा अकबर राठौड़ों का दमन करने आया तो दुर्गादास राजसिंह ने उसे मुगल सम्राट बनाने का आश्वासन देकर विद्रोह करवा दिया। अकबर ने 1 जनवरी 1681 को नडोल में अपने को भारत का सम्राट घोषित कर दिया।

- 1698 ई. में औरंगजेब ने जालौर, सांचोर का सिवाना के परगना जागीर में देकर अजितसिंह को शाही मनसब प्रदान की तथा दुर्गादास को तीन हजारी मनसब प्रदान कर अन्हिलवाडा व पाटन का फौजदार नियुक्त किया।

- दुर्गादास राठौड़ ने राठौड़ों के तीस वर्षीय युद्ध में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, उसे **टॉड ने 'राठौड़ों का यूलीसीज'** कहा है। अजितसिंह से विवाद होने पर दुर्गादास उज्जैन चले जाते हैं शिप्रा नदी के किनारे 1718 ई. में इनकी मृत्यु हो जाती है।

- H. ओझा ने वीर दुर्गादास को मारवाड़ का **'अणबिन्दिया मोती'** कहा तथा टॉड ने दुर्गादास को मारवाड़ दुर्ग की बाहरी दीवार बताया।

- **अजित सिंह की हत्या उसके पुत्र बख्त सिंह कर देता है।**

•

- **गोरा धाय :-** मारवाड़ की पत्नी। इसी ने मेहत्तर का रूप धरकर अजितसिंह को औरंगजेब की कैद से निकाला तथा कालबेलिया बने मुकुन्ददास को सौंप दिया। गोरा धाय की छतरी मेहरानगढ़ दुर्ग में स्थित है।

अभयसिंह

- 1730 ई में खेजड़ली आंदोलन हुआ, अमृता देवी के साथ 368 महिलाओं ने बलिदान किया।
- राजस्थान के इतिहास में वृक्षों को बचाने के लिए सर्वप्रथम विश्वी समाज की करमा, गोरा का बलिदान 1604 ई. में महत्वपूर्ण माना जाता है।

विजयसिंह

- इन्होंने अपने नाम से **विजयशाही सिक्के** चलाए तथा विजय महल का निर्माण किया। विजयसिंह वैष्णव संप्रदाय के अनुयायी थे इन्होंने राज्य में माँस, मदिरा पर बिल्कुल रोक लगा दी थी। इनकी गुलाबराय नामक एक जाट पासवान थी जिसका प्रशासन में हस्तक्षेप था।

गुलाबराय के अत्यन्त सुन्दर होने के

कारण **कवि श्यामलदास ने गुलाबराय को मारवाड़ की नूरजहाँ कहा।**

- विजयसिंह ने मराठों से निपटने के लिए **नागों और दादू पंथियों** की एक सेना तैयार की। ये लोग बाण चलाने में दक्ष थे।

मानसिंह

नाथ सम्प्रदाय के अनुयायी थे। इन्होंने नाथ सम्प्रदाय की पीठ **महा मंदिर** (मण्डौर) की स्थापना की। इसे 84 खंभों का मंदिर भी कहा जाता है। जोधपुर में मान प्रकाश पुस्तकालय स्थापित किया। इनका **दरबारी कवि बांकीदास** था जिसने बांकीदास की ख्यात लिखी। इसी के शासनकाल में कृष्णाकुमारी की घटना घटी तथा **अंग्रेजों से सहायक संधी की।**

राठौड़ों के प्रभुत्व में आने से पूर्व बीकानेर का क्षेत्र जांगल प्रदेश के नाम से जाना जाता था जो मारवाड़ के उत्तर में स्थित है। महाभारत काल में यह प्रदेश कुरू प्रदेश के अन्तर्गत आता था। मारवाड़ के शासक राव जोधा के छः रानियां व 17 पुत्र थे। जिसमें दूसरे पुत्र बीका ने 1466 में जांगल प्रदेश में राठौड़ वंश की रियासत की स्थापना की तथा 1488 में बीकानेर नगर बसाया। अतः राव बीका को बीकानेर राज्य का संस्थापक माना जाता है। राव जोधा का सबसे बड़ा पुत्र राव नीबा, राव जोधा के शासन काल में ही स्वर्गवासी हो गया था। दूसरा पुत्र राव बीका ही मारवाड़ का उत्तराधिकारी था लेकिन राव जोधा ने अपनी प्रिय पत्नी/रानी जसमादे के प्रभाव में आकर दूसरे पुत्र राव सातल को जोधपुर का उत्तराधिकारी घोषित कर दिया। बीका नाराज हो गया। 1465-66 में करणी माता के आशीर्वाद से राव बीका ने जांगल प्रदेश पर अधिकार कर लिया। बीका के बढ़ते प्रभाव को देखकर राव जोधा घबरा गया व उसको डर था कि कहीं बीका जोधपुर पर आक्रमण न कर दे किन्तु बीका ने अपने पिता को वचन दिया कि मैं जोधपुर पर कभी आक्रमण नहीं करूंगा व जोधपुर रियासत को अपना ज्येष्ठ मानुंगा।

राव नरा (1504-1505) –

राव बीका के मृत्यु के बाद उसका पुत्र बीकानेर का शासक बना जिसकी कुछ महिनों बाद ही मृत्यु हो गई।

राव लुणकरण (1505-1526) –

राव नरा की मृत्यु के बाद लुणकरण बीकानेर का शासक बन गया जिसने डीडवाणा, सिघाणा व बांगड़ प्रदेश को अपने प्रदेश में मिला लिया। यह भी अपने पिता की तरह वीर और प्रजापालक था। वैसे बीकानेर के लुणकरण के नाम से भी जाना जाता है। बीठू सुजा में अपने ग्रन्थ राव जैतसी रो छन्द में लुणकरण की दानशीलता का उल्लेख किया है। लुणकरण की मृत्यु के बाद उसका पुत्र राव जैतसिंह बीकानेर का शासक बना। जिसने **गंगाणी के युद्ध** में जोधपुर के शासक राव गागासिंह की मदद की। जोधपुर के शासक राव मालदेव ने 1541 में अपनी विस्तारवादी व महत्वकांक्षी नीति के तहत बीकानेर पर आक्रमण कर दिया राव जैतसी पाहिबा/सौहुए के युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुआ व मालदेव ने यहाँ का प्रशासन सेनापति कूपा को सौंप दिया। यह पहला अवसर था जब दोनों रियासतों के मध्य युद्ध हुआ। इससे पहले ये सामुहिक रूप से प्रतिकार करते थे।

राव कल्याण मल –

पाहिबा के युद्ध में जैतसी वीरगति को प्राप्त हुआ अतः उसका पुत्र कल्याणमल शेरशाह सूरी के पास चला गया। 1544 में शेरशाह सूरी ने मारवाड़ पर आक्रमण किया व गीर्ी-सुमेल के मैदान में मालदेव पराजित हो गया। शेरशाह सूरी ने बीकानेर का राज्य राव कल्याण मल को सौंप दिया।

1570 ई. में जब अकबर ने नागौर दरबार का आयोजन किया तो बीकानेर शासक राव कल्याणमल अपने पुत्र रायसिंह व पृथ्वीराज के साथ नागौर दरबार में उपस्थित हुआ तथा अकबर की अधिनता स्वीकार कर ली।

राव कल्याणमल बीकानेर का प्रथम शासक है जिसने मुगल अधिनता स्वीकार की। अकबर ने कल्याण सिंह के बड़े पुत्र रायसिंह को जोधपुर का प्रशासक नियुक्त कर दिया व छोटे पुत्र पृथ्वीराज को मुगल दरबार में ले गया।

महाराजा रायसिंह (1574-1612) –

1574 में रायसिंह बीकानेर का शासक बना। यह अकबर व जहांगीर का विश्वसनीय सेनानायक बना। रायसिंह ने महाराजा की उपाधि धारण कर अपने मंत्री कर्मचंद की देखरेख में बीकानेर दुर्ग का निर्माण करवाया तथा दुर्ग में एक प्रशस्ति लगाई। रायसिंह विद्यानुरागी व धार्मिक प्रवृत्ति का था। जिसने 'राय सिंह महोत्सव' व ज्योतिष रत्नमाला जैसे ग्रंथों की रचना की। "**कर्मचन्द्रवंशौत्कीर्तिम् काव्यम्**" में महाराजा रायसिंह को राजेन्द्र कहा गया है। इनकी दानशीलता के कारण मुंशीदेवी प्रसाद ने **इन्देराजपूतानें के करण** की संज्ञा दी। 1612 में दक्षिण भारत के बुरहानपुर में इनकी मृत्यु हो गई।

दाव दलपत (1612-13)

महाराजा रायसिंह की मृत्यु के बाद दलपत सिंह बीकानेर का शासक बना। राव दलपत का सम्राट जहांगीर से मनमुटाव हो गया। जहांगीर ने दलपत को गद्दी से हटाकर उसके भाई सूरसिंह को शासक बना दिया।

करण सिंह (1631-1669)

सूर सिंह की मृत्यु के बाद उसका पुत्र करणसिंह शासक बना। औरंगजेब ने इसे जांगलधर बादशाह की उपाधि दी।

अनुपसिंह

1669 में अनुपसिंह बीकानेर का महाराजा बना। अनुपसिंह ने दक्षिण में मराठों का दमन किया जिससे प्रसन्न होकर औरंगजेब ने इसे **महाराजा व 'माहिबभरातीव'** की उपाधि प्रदान की।

स्वरूप सिंह

1690 में अनुपसिंह की मृत्यु के बाद उसका नाबालिग पुत्र स्वरूप सिंह बीकानेर का शासक बना उसकी 1702 में मृत्यु हो गई व उसके बाद सुजानसिंह शासक बना।

सूरतसिंह

बीकानेर के शासक सूरतसिंह ने 1818 में ईस्ट इण्डिया कम्पनी से सन्धि कर ली।

किशनगढ़ रियासत

- इसकी स्थापना मोटा राजा उदयसिंह के पुत्र किशन सिंह ने 1609 में की थी।
- जहाँगीर ने यहाँ के शासक को महाराज का खिताब दिया।
- यहाँ के राजा सावंतसिंह प्रसिद्ध राजा हुए, जो कृष्ण-भक्ति में राज-पाट छोड़कर वृन्दावन चले गये एवं नागरीदास के नाम से प्रसिद्ध हुए।

आमेर का कच्छवाह वंश (ढूंढाड़ राज्य)

- आमेर के कच्छवाह स्वयं को **श्रीराम के पुत्र कुश** की सन्तान मानते हैं, आमेर से प्राप्त शिलालेख में भी इन्हें '**रघुकुल तिलक**' के नाम से जाना गया है।
- **दूल्हेराय** नामक व्यक्ति ने सर्वप्रथम कच्छवाह वंश की स्थापना की थी। 1137 ई. में बड़गूजरों को हराकर दूल्हेराय ने ढूंढाड़ राज्य को बसाया था, दूल्हेराय ने सर्वप्रथम दौसा को अपनी राजधानी बनाया, जो इस राज्य की सबसे प्राचीन राजधानी थी, दूल्हेराय ने इस राजधानी को मीणाओं से प्राप्त किया था।
- दूल्हेराय ने रामगढ़ नामक स्थान पर जमुवामाता के मंदिर का निर्माण कराया तथा **जमूवा माता** को कच्छवाह वंश की कुलदेवी के रूप में स्थापित भी किया था, ढूंढाड़ में प्राचीन रामगढ़ गुलाब की खेती के लिए प्रसिद्ध था, जिसके कारण "रामगढ़ को ढूंढास" का पुष्कर कहा गया।
- दूल्हेराय ने बाद में रामगढ़ को जीतकर इसे राजधानी बनाया इस प्रकार दूल्हेराय के शासन की दो राजधानियां अस्तित्व में आयीं, दूल्हेराय के पश्चात् **कोकिलदेव** ने आमेर के मीणाओं को पराजित कर इस सम्पन्न भू-भाग को कच्छवाह वंश का एक अंग बनाया, बाद में कोकिलदेव ने आमेर राज्य को राजधानी के रूप में स्थापित किया।
- राजा कोकिलदेव पश्चात् राजदेव नामक व्यक्ति ने आमेर के महलों का निर्माण कराया, जिन्हें कदमीमहल कहा जाता था, ये महल आमेर राज्य का कच्छवाह वंश के प्राचीन महल माने जाते थे। इन महलों में कच्छवाह वंश के नवीन शासकों का राज्याभिषेक सम्पन्न होता था।

पृथ्वीराज

- कच्छवाह शासक पृथ्वीराज ने खानवा के युद्ध में सांगा का साथ दिया था।
- पृथ्वीराज ने रामानुज सम्प्रदाय की पीठ निर्माण कराया, क्योंकि पृथ्वीराज संत कृष्णदास पयहारी से प्रभावित हुए थे, रामानुज सम्प्रदाय की पीठ गलता जी (जयपुर) में स्थित है। गलता जी को मंकी वैली के नाम से जाना जाता है।
- पृथ्वीराज के पुत्र सांगा ने सांगानेर नामक कस्बा बसाया था, आमेर के इस शासक ने बारह कोटरी नामक व्यवस्था का निर्माण किया, इस व्यवस्था के अन्तर्गत पृथ्वीराज ने आमेर को

बारह भागों में विभाजित कर दिया तथा इसी विभाजन को पृथ्वीराज ने अपने 12 पुत्रों में बांट दिया, जिसके कारण यह **बारह कोटरी व्यवस्था** कहलाई।

- पृथ्वीराज की पत्नी **बालाबाई ने आमेर में लक्ष्मीनारायण मंदिर** निर्माण कराया।
- पृथ्वीराज की मृत्यु के बाद उसका छोटा लड़का पूर्णमल आमेर का शासक बना किन्तु बाद में भीमदेव ने उसे गद्दी से उतार दिया जिससे कच्छावाहों में गृहयुद्ध आरम्भ हो गया। इससे कच्छावाहों के राज्य में पहले अफगानों का फिर मुगलों का प्रभाव बढ़ा। भीमदेव के बाद उसका पुत्र रत्नसिंह गद्दी पर बैठा। रत्नसिंह को उसके छोटे भाई भारमल ने जहर पिला कर मार डाला और स्वयं राजा बन गया।

भारमल

- राजपुतानों का यह एकमात्र शासक, जिसमें सर्वप्रथम मुगलों की अधीनता को स्वीकार कर मुगलों के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किए थे, भारमल उसी पृथ्वीराज का पुत्र था, जिसने खानवा के युद्ध में राणा सांगा की सेना का नेतृत्व कर बाबर के विरुद्ध युद्ध किया, लेकिन भारमल ने उसी मुगल वंश में अपनी पुत्री का विवाह किया था।
- 1562 ई. में चंगुलाई खां के नेतृत्व में सांगानेर नामक स्थान पर भारमल की मुगल सम्राट अकबर से मुलाकात हुई तथा सांभर नामक स्थान पर भारमल ने अपनी पुत्री हरकाबाई का विवाह अकबर के साथ किया था, मुगल सम्राट अकबर ने हरकाबाई **कोमरियम उज्जमानी** उपाधि से सम्मानित किया था।
- मुगल सम्राट अकबर ने राजा भारमल को अमीर-उल-उमरा की उपाधि से सम्मानित किया, राजा भारमल ने आमेर में निर्माण कार्य प्रारम्भ किया।

राजा भगवन्तदास (1573-1589 ई.)

भारमल की मृत्यु के पुत्र भगवन्तदास आमेर की सिंहासन पर बैठा और इन्होंने अपनी पुत्री का विवाह सहजादा सलीम के साथ किया। जहाँगीर ने इसे **सुल्तान-ए-निशा** की उपाधि दी। इससे खुसरों का जन्म हुआ। भगवन्तदास को 5000 का मनसब एवं अमीर-उल-उमरा की उपाधि दी।

मानसिंह प्रथम (1589-1614 ई.)

- आमेर कच्छवाह शासकों में अकबर के लिए सबसे विश्वसनीय राजा मानसिंह थे, जिन्होंने अपनी छोटी सी उम्र से ही अकबर के सैन्य अभियानों का कुशल नेतृत्व किया था, राजा मानसिंह का विधिवत तरीके से राज्यभिषेक 1589 ई. को हुआ। राजा मानसिंह अकबर के दरबार में प्रसिद्ध नवरत्नों में शामिल थे।
- राजा मानसिंह प्रथम को ऐतिहासिक इमारतों तथा अकबर कही महत्वपूर्ण विजयों के लिए याद किया जाता है, राजा मानसिंह के अकबर के **काबुल अभियान, बिहार विजय, उड़ीसा विजय तथा बंगाल पर विजय प्राप्त की थी,**

राजा मानसिंह ने अकबर की ओर से राणा प्रताप के विरूद्ध **हल्दीघाटी के युद्ध में मुगल सेना का नेतृत्व** किया था।

- राजा मानसिंह प्रथम राजपूताने का प्रथम शासक था या आमेर के कच्छवाह वंश के शासकों में प्रथम शासक था, जिसे मुगल सम्राट अकबर ने **सात हजारी मनसब का पद प्रदान किया तथा फर्जन्द की उपाधि** से भी सम्मानित किया था।
- बैराठ के समीप पंचमहल राजा मानसिंह ने मुगल सम्राट अकबर ने आराम पसन्दगी के लिए तैयार करवाया था, जब अकबर ख्वाजा साहब की दरगाह (अजमेर) के लिए जाते थे तब विश्राम हेतु अकबर का पड़ाव यहाँ डाला जाता था, मुगल सम्राट अकबर ने पुत्र प्राप्ति के लिए एक बार दिल्ली से पैदल यात्रा करते हुए इसी पंचमहला में विश्राम किया, इसी यात्रा के दौरान अकबर को पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई, जिसे मुगल वंश में सलीम के नाम से जाना गया।

जगत शिरामणि का मन्दिर

- आमेर में इस मंदिर का निर्माण राजा मानसिंह प्रथम की रानी कनकावती ने अपने पुत्र जगतसिंह की स्मृति में कराया था, जगतसिंह ने भी मुगल सम्राट अकबर के लिए कांगड़ा (हिमाचल) की विजय में मुगल सेना का नेतृत्व किया था। इस कारण मुगल सम्राट ने जगत सिंह को रायजादा की उपाधि से सम्मानित किया, राजा मानसिंह के शासनकाल में जगतसिंह को बंगाल में नियुक्त किया था जहाँ जगतसिंह की अधिक शराब पीने के कारण मृत्यु हो जाती है।
- आमेर कच्छवाह वंश की इष्ट देवी के रूप में इस मंदिर का निर्माण राजा मानसिंह प्रथम बंगाल शैली में काले संगमरमर के पत्थरों से कराया, राजा मानसिंह ने इस देवी की प्रतिमा को ढाका के राजा केदारराय को परास्त कर प्राप्त की थी। इस मंदिर की देवी की अर्चना में जल व मदिरा का भोग लगाया जाता है।
- राजा मानसिंह ने पुष्कर में एक भव्य एवं कलात्मक मानमहल का निर्माण कराया था, जो आज राज्य सरकार के सहयोग से एक पैलेस के रूप में (होटल) संचालित है, मानसिंह ने आमेर के महलों का भी निर्माण कराया तथा आमेर दुर्ग का पुनर्निर्माण कराया था।
- राजा मानसिंह के शासनकाल में उसका दरबारी लेखक **कवि मुरारीदान ने मानप्रकाश** नामक ऐतिहासिक ग्रन्थ की रचना की इसी प्रकार **जगन्नाथ ने मानसिंह कीर्ति मुक्तावली** नाम से ग्रन्थ लिखा। राजा मानसिंह के दरबारी राजकवि **हायाबारहठ** थे।
- सन्त दादूदयाल मानसिंह प्रथम के समकालीन थे तथा यह भी माना जाता है कि तुलसी दास जी के साथ उनकी घनिष्ठ मित्रता थी।
- 1614 ई. में मानसिंह का **एलीचपुर** में देहान्त हुआ।

मिर्जा राजा जयसिंह (1621 ई.-1667 ई.)

- आमेर के कच्छवाह शासकों में सबसे महत्वपूर्ण एवं योग्य शासकों में इन्हें याद किया जाता है, आमेर का सर्वाधिक विकास इन्हीं के शासनकाल में हुआ, जबकि सवाई जयसिंह के शासनकाल में जयपुर का विकास हुआ, 1621 ई. में मात्र 11 वर्ष की आयु में ये आमेर के शासक बने।
- आमेर के कच्छवाह इतिहास में **मिर्जा राजा जयसिंह ने सर्वाधिक 46 वर्ष तक शासन किया**, इन्होंने अपनी सेवाएँ तीन मुगल शासकों को प्रदान की : जहाँगीर, शाहजहाँ व औरंगजेब।
- मुगल सम्राट शाहजहाँ ने जयसिंह को '**मिर्जा' राजा**' की उपाधि कन्धार अभियान के उपरान्त प्रदान की, क्योंकि जयसिंह ने शाहजहाँ के लिए कन्धार पर विजय प्राप्त की थी।
- मुगल सम्राट औरंगजेब ने शिवाजी के विरुद्ध अभियान पर मिर्जा राजा जयसिंह को भेजा, जिन्होंने शिवाजी को मुगल सम्राट से संधि हेतु विवश किया। 11 जून 1665 को दोनों के मध्य संधि हो गई, **जिसे पुरंदर की संधि** कहते हैं।
- मिर्जा राजा जयसिंह ने जयपुर में जयगढ़ किले के किले का निर्माण कराया, इस महल में एक मनोरंजन घर भी था, जिसे कठपुतली घर कहा जाता है।
- मिर्जा राजा जयसिंह ने नाहरगढ़ दुर्ग की नींव रखी जिसे सवाई जयसिंह ने पूरा कराया।
- आमेर के कच्छवाह शासकों में मिर्जा राजा जयसिंह एक विद्वान शासक थे। जिन्होंने संस्कृत भाषा को लोकप्रिय बनाया तथा बनारस में संस्कृत विद्यालय का निर्माण कराया।
- मिर्जा राजा जयसिंह के दरबारी कवियों में बिहारी को संरक्षण प्राप्त था, जिसने '**बिहारी सतसई**' नामक ग्रन्थ की रचना की, इसी प्रकार राज्य कवियों में कुलपति मिश्र व रामकवि को भी संरक्षण प्राप्त था।
- औरंगजेब के दक्षिण अभियान के समय 1667 ई. में बुरहानपुर में मिर्जा राजा जयसिंह का देहान्त हो गया, इस शासक की मृत्यु के पश्चात रामसिंह प्रथम व विशनसिंह एक कमजोर शासक हुए।

सवाई जयसिंह

- कच्छवाह वंश के शासकों में सवाई जयसिंह का वास्तविक नाम **विजयसिंह** था, सवाई जयसिंह ने आमेर से शासन न चलाकर जयपुर से नयी राजधानी के रूप में शासन को क्रियान्वित किया।
- मुगल सम्राट औरंगजेब ने जयसिंह को सवाई की उपाधि से सम्मानित किया। इस राजवंश में यह प्रथम शासक था, जिसे सवाई की उपाधि से नवाजा गया था, जबकि राजपूताने में सवाई की उपाधि सूरसिंह को (जोधपुर राठौड़ वंश) अकबर प्रदान की थी।
- 1700 ई. में विशनसिंह की मृत्यु के पश्चात पुत्र के रूप में जयसिंह कच्छवाह वंश का शासक बना, जयसिंह के शासनकाल में मुगल साम्राज्य में पुनः उत्तराधिकार के लिए संघर्ष छिड़ गया,

जिसमें सवाई जयसिंह ने आजम का पक्ष लिया इस बात से मुअज्जम सवाई जयसिंह से नाराज हो गया तब मुअज्जम ने आमेर पर आक्रमण कर अधिकार कर लिया, मुअज्जम को ही बहादुरशाह प्रथम के नाम से जाना जाता है, बहादुरशाह ने आमेर का नाम परिवर्तित कर मोमिनाबाद रखा, इसी राज्य को इस्लामाबाद के नाम से भी जाना जाता था।

- सवाई जयसिंह के शासन काल में भरतपुर के जाट राजा बदनसिंह ने इस शासक के साथ मिलकर अनेक भू-भागों पर विजय प्राप्त की, जिसके उपराज्य सवाई जयसिंह ने जाट राजा **बदनसिंह को ब्रजराज की उपाधि तथा डीग का परगना प्रदान किया था।**
- सवाई जयसिंह ने राजपूताना के अनेक राज्यों के शासकों को एकत्रित कर मराठों के विरुद्ध एक सम्मेलन का आयोजन कराया, जिसे हुरड़ा सम्मेलन कहा गया, यह सम्मेलन मेवाड़ के भीलवाड़ा के निकट हुरड़ा नामक गांव में आयोजित हुआ, इस सम्मेलन को आयोजित करने का श्रेय सवाई जयसिंह को दिया जाता है, यह सम्मेलन 17 जुलाई, 1734 ई. को आयोजित हुआ, लेकिन अपने निजी स्वार्थों के कारण यह सम्मेलन सफल नहीं हो सका, इस सम्मेलन की अध्यक्षता मेवाड़ के महाराजा जगतसिंह द्वितीय ने की थी।
- सवाई जयसिंह ने **गंगवाना के युद्ध** में मारवाड़ के जोधपुर के अभयसिंह तथा नागौर के तख्तसिंह की एक संयुक्त सेना को पराजित किया। वर्तमान में गंगवाना/मंगवाना नामक स्थान जोधपुर जिले में स्थित है, गंगवाना युद्ध का मुख्य कारण राज्यों की सीमा निर्धारण था।
- जयपुर के कच्छवाह शासकों में सवाई जयसिंह एक विद्यानुरागी शासक होने के साथ-साथ वास्तुशास्त्र में भी विशेष रुचि रखते थे, **पं. जगन्नाथ को जयपुर की नींव रखने का श्रेय दिया जाता है, सवाई जयसिंह ने बंगाल के प्रसिद्ध वास्तुकार पं.विद्याधर भट्टाचार्य के द्वारा जयपुर शहर का डिजाइन तैयार करवाया**, इस प्रकार सवाई जयसिंह के शासनकाल में 18 नवम्बर, 1727 को आधुनिक जयपुर शहर का निर्माण हुआ इसके बाद जयसिंह ने जयपुर को ही अपनी स्थाई राजधानी बनाया।
- सवाई जयसिंह ने जयपुर के सिटी पैलेस में चन्द्रमहल का निर्माण कराया इस महल में कुल सात मंजिलें थीं, जिसमें 7वीं मंजिल को मुकुट मन्दिर के नाम से जाना गया, इस चन्द्रमहल की दीवारों पर आदमकद चित्र अंकित है।
- राजपुताने में सवाई जयसिंह के शासनकाल में ही सर्वप्रथम आदमकद चित्रों की नींव डाली गई थी।
- सवाई जयसिंह की ज्योतिष ने भी रुचि थी अतः **भारत में 5 वेदशालाओं** का निर्माण कराया, जिन्हें जन्तर-मन्तर कहा जाता था, जिनमें जयपुर, दिल्ली, बनारस, उज्जैन तथा मथुरा मुख्य थी, इन पांच वेदशालाओं में प्रथम व प्राचीन वेदशाला दिल्ली की थी। सबसे बड़ी व नवीन वेदशाला जयपुर की थी। सवाई जयसिंह ने ग्रह नक्षत्रों की खोज के लिए 'जीज मोहम्मद शाही' ग्रंथ की रचना की।

- सवाई जयसिंह ने जयपुर की वेधशाला में ऊंचाई नापने के लिए रामयंत्र नामक उपकरण तथा समय जाने के लिए सम्राट यंत्र लगाए थे, सम्राट यंत्र (सूर्य घड़ी) को दुनिया की सबसे बड़ी घड़ी का दर्जा प्राप्त था।
- जयपुर के कच्छवाह शासकों में यह अंतिम शासक था, जिनसे **अश्वमेध यज्ञ** को सम्पन्न कराया इस यज्ञ का मुख्य पुरोहित पुण्डरीक रत्नाकर थे, पुण्डरीक रत्नाकार ने एक प्रसिद्ध ग्रन्थ की रचना की जिसे जयसिंह कल्पद्रुम के नाम से जाना जाता है।
- सवाई जयसिंह प्रथम शासक था, जिसने **विदेशी जाति पुर्तगालियों से सम्बन्ध** स्थापित किए थे, सवाई जयसिंह ने अपने एक दल को **राजा एमानुअल** के दरबार में भेजा जहां उन्होंने अनेक ग्रन्थों का अध्ययन किया तथा उन ग्रन्थों को जयपुर मंगवाया, पुर्तगाल के राजा एमानुअल ने भी जेवियर डिसिल्वा को सवाई जयसिंह के दरबार में भेजा, जिसने जयपुर में पोथीखाना के अनेक ग्रन्थों का अध्ययन किया

सवाई ईश्वरसिंह

- सवाई जयसिंह की मृत्यु के पश्चात सवाई ईश्वरसिंह को मराठों के वैमनस्य का सामना करना पड़ा, क्योंकि जयसिंह ने बूंदी के उत्तराधिकार के प्रश्न पर हस्तक्षेप करना प्रारम्भ कर दिया, बूंदी के शासकों ने मराठों की सहायता से सवाई ईश्वरसिंह पर आक्रमण करने की योजना बनाई, 1747 ई. को जयपुर के शासक सवाई ईश्वर सिंह ने अपने भाई माधोसिंह प्रथम तथा कोटा, बूंदी, मेवाड़ व मराठों की संयुक्त सेना को परिजत किया। यह विजय राजमहल (टोंक) की विजय के रूप में जानी गई। इस विजय के उपलक्ष्य में सवाई ईश्वरसिंह ने जयपुर के त्रिपोलया बाजार में एक मीनार का निर्माण कराया, जिसे **ईसरलाट यासरगासूली** कहा गया।

बगरू का युद्ध

- पराजित माधोसिंह प्रथम ने मल्हार राव होल्कर की सहायता से जयपुर के समीप बगरू नामक स्थान पर ईश्वरसिंह को पराजित किया, राज्य पर अधिकार करने के पश्चात ईश्वरसिंह पर यह शर्त लगा दी गई कि ईश्वरसिंह 30 लाख रूपये हर्जाने के रूप में मराठों को देगा, इस शर्त पर सवाई ईश्वरसिंह को जयपुर का शासक मान लिया गया, लेकिन सवाई ईश्वरसिंह ने यह बड़ी धनराशि देने के लिए अपनी असमर्थता प्रकट की, 1750 ई. में सवाई ईश्वरसिंह ने सरगासूली से कूदकर आत्महत्या कर ली।

सवाई माधोसिंह प्रथम

- सवाई ईश्वरसिंह के आत्महत्या कर लेने के बाद उसका भाई माधोसिंह प्रथम जयपुर का शासक बना, यह मल्हार राव होल्कर की मदद से जयपुर का शासक बना था। माधोसिंह के राजा बनने के बाद मराठा सरदार मल्हार राव होल्कर एवं जय अप्पा सिंधिया ने इससे भारी रकम की माँग की, जिसके न चुकाने पर मराठा सैनिकों ने जयपुर में उपद्रव मचाया, फलस्वरूप नागरिकों ने विद्रोह कर मराठा सैनिकों का कत्लेआम कर दिया। महाराजा माधोसिंह ने मुगल बादशाह अहमदशाह एवं जाट महाराजा सूरजमल (भरतपुर) एवं अवध नवाब सफदरजंग के मध्य

समझौता करवाया। इसके परिणामस्वरूप बादशाह ने रणथम्भौर किला माधोसिंह को दे दिया। इससे नाराज़ हो कोटा महाराजा शत्रुसाल ने जयपुर पर आक्रमण कर नवम्बर 1761 ई. में **भटवाड़ा के युद्ध** में जयपुर की सेना को हराया। 1763 ई. में सवाई माधोसिंह ने रणथम्भौर दुर्ग के पास **सवाई माधोपुरनगर** बसाया। 1768 ई. में इनकी मृत्यु को गई। इन्होंने जयपुर में **मोती झूंगरी** पर महलों का निर्माण करवाया।

- सवाई माधोसिंह प्रथम ने **नाहरगढ़ दुर्ग** में अपनी नौ प्रेयसियों के लिए एक जैसे महलों का निर्माण विक्टोरिया शैली में कराया था।
- माधोसिंह प्रथम का दरबारी कवि द्वारिकानाथ भट्ट था, जिसने '**बारी वैराग्य**' नामक ग्रंथ की रचना की थी, सवाई माधोसिंह प्रथम के पश्चात 1768-1778 ई. के मध्य एक कमजोर शासक पृथ्वीसिंह का शासन रहा, लेकिन 1780 ई. में पृथ्वीसिंह की मृत्यु के पश्चात प्रतापसिंह जयपुर का शासक बना।

सवाई प्रतापसिंह

- सवाई प्रतापसिंह जयपुर के कच्छवाह शासकों में एक महत्वपूर्ण एवं विद्वान शासक माने जाते हैं, प्रतापसिंह महान कवियों, विद्वानों व प्रसिद्ध लेखकों का आश्रयदाता था, सवाई प्रतापसिंह स्वयं ब्रजनिधि नाम से कविताएं लिखते थे, जिसके कारण इन्हें **ब्रजनिधि** शासक भी कहा जाता था, इनका सम्पूर्ण वर्णन ब्रजनिधि ग्रन्थावली में मिलता है।
- सवाई प्रतापसिंह के शासनकाल में विभिन्न क्षेत्रों के 22 विद्वान दरबार की शोभा बढ़ाते थे, जिन्हें **बाईसी या गुणीजन खान** के नाम से जाना जाता था, इनमें देवर्षि ब्रजपाल भट्ट, गणपति भारति, चांद खां, द्वारिकानाथ भट्ट आदि प्रमुख थे, प्रतापसिंह ने चांद खां को बुद्ध प्रकाश की उपाधि से सम्मानित किया था।
- सवाई प्रतापसिंह ने अपने शासनकाल में कला व संगीत के लिए एक विशाल सम्मेलन का आयोजन कराया, इस सम्मेलन का समस्त लेखन कार्य प्रतापसिंह ने अपने दरबारी कवि देवर्षि ब्रजपाल भट्ट को सौंपा तथा संगीत के प्रसिद्ध ग्रंथ **राधा गोविन्दसंगीत सार की रचना देवर्षि ब्रजपाल भट्ट ने की।**
- सवाई प्रतापसिंह ने 1799 ई. में एक ऐतिहासिक इमारत **हवामहल** का निर्माण जयपुर में कराया इस इमारत को राजस्थान का एयरपोर्ट कहते हैं, इस इमारत के वास्तुकार लालचन्द उस्ता थे, जिन्होंने भगवान श्री कृष्ण के मुकुट के समान इसकी आकृति तैयार की, इस इमारत में कुल पांच मंजिलें थीं, इसमें कुल 953 खिड़कियाँ हैं।
- जयपुर के इस कच्छवाह शासक के शासनकाल में एक अंग्रेज अधिकारी जार्ज थॉमस ने आक्रमण किया, जिसका मुकाबला प्रतापसिंह से हुआ।

सवाई जगतसिंह

- जयपुर के कच्छवाह राजवंश में जयपुर के शासक के नाम से प्रचलित इस शासक को जयपुर की बदनामी का ताज मिला, इसका शासन काल 1803-1818 के बीच रहा, सवाई जगतसिंह का संबंध रसकपुर नामक वेश्या से था, जिसका प्रभाव जयपुर के प्रशासन में बढ़ा चला जा रहा

था, जगतसिंह ने **रसकपुर** नामक सिक्कों का भी प्रचलन करवा दिया था, इस घटना के कारण जगतसिंह को जयपुर के प्रजा के सामने बदनाम होना पड़ा बाद में रसकपुर को नाहरगढ़ के दुर्ग में बन्दी बनाकर रखा गया।

- सवाई जगतसिंह के शासन काल की सबसे महत्वपूर्ण घटना यह थी कि इसने अपने राज्य को मराठों व पिण्डारियों के आक्रमणों से बचाने के लिए **ब्रिटिश सरकार से 1818 ई में संधि** कर ली थी।
- जयपुर में ब्रजबिहारीजी के मंदिर का निर्माण सवाई जगतसिंह ने करवाया था।
- सवाई जगतसिंह ने 1807 ई में गिंगोली नामक युद्ध में जोधपुर के शासक मानसिंह की सेना को पराजित किया, यह युद्ध मेवाड की रानी कृष्णाकुमारी को लेकर लड़ा गया।

सवाई रामसिंह द्वितीय

- जयपुर राज्य के सामाजिक परिवर्तनों के लिए रामसिंह को याद किया जाता है, सवाई रामसिंह से पूर्व 1813-35 के बीच जयपुर का एक कमजोर शासक सवाई जयसिंह तृतीय का शासनकाल रहा, लेकिन प्रशासन पर एजेन्ट टु गर्वनर जनरल का आधिपत्य होने के कारण जयसिंह तृतीय की कोई विशेष उपलब्धि नहीं रही।
- 1835 ई. जब रामसिंह जयपुर के सिंहासन पर बैठे तब वे नाबालिग थे, अतः ब्रिटिश सरकार की ओर से कौंसिल बनाई गई, जिसके द्वारा जयपुर का शासन क्रियान्वित किया गया, रामसिंह के शासनकाल में ही 1844 ई. में एक अंग्रेज अधिकारी **जॉनलुडलो** को जयपुर का प्रशासक बनाया गया और इसी के शासन काल में समस्त सामाजिक परिवर्तन हुए, मानव के क्रय-विक्रय एवं सती प्रथा पर रोक इसी के प्रयासों से लगी।
- सवाई रामसिंह द्वितीय के शासनकाल में ही भारत में 1857 की क्रांति घटित हुई, इस क्रांति का प्रभाव राजपूताने के अनेक राज्यों में देखा गया, सवाई रामसिंह ने भी 1857 की क्रांति में अप्रत्यक्ष रूप से ब्रिटिश सरकार का सहयोग किया, जिसके कारण ब्रिटिश सरकार रामसिंह द्वितीय को कोटपुतली का परगना जागीर के रूप में प्रदान किया तथा **सितार-ए-हिन्द** की उपाधि से सम्मानित किया गया।
- सवाई रामसिंह द्वितीय के शासनकाल में ब्रिटेन के राजकुमार **एडवर्ड पंचम** के आगमन के समय जयपुर शहर को 1868 ई. में गुलाबी रंग से रंगवाया गया, जिसके कारण इसे गुलाबी शहर (पिंकसिटी) के नाम से जाना गया।
- रामसिंह द्वितीय के शासनकाल में जयपुर के लिए पिंक सिटी शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग ब्रिटिश पत्रकार स्टेनलेरीड ने अपनी पुस्तक रॉयल टूर टू इण्डिया किया तथा भारत के प्रसिद्ध वैज्ञानिक सी.वी रमन ने जयपुर को रंगश्री द्वीप की संज्ञा प्रदान की।
- सवाई रामसिंह द्वितीय के शासनकाल में ही वैल्स के राजकुमार जॉन अल्बर्ट जयपुर की यात्रा की, 1876 ई. में इन्हीं के द्वारा जयपुर के अल्बर्ट हॉल की नींव रखी गई, अल्बर्ट हॉल का

वास्तुकार सर जैकफ था इस इमारत के अलावा रामनिवास बाग, महाराजा कॉलेज, संस्कृत कॉलेज तथा हुनरी मदरसा (राजस्थान स्कूल ऑफ आर्ट) का निर्माण हुआ।

- हुनरी मदरसा में रामसिंह द्वितीय ने कला को संरक्षण प्रदान करने के लिए अनेक कुशल कारीगरों को संरक्षण दिया।

सवाई माधोसिंह द्वितीय

- 1880 ई. में सवाई रामसिंह द्वितीय की मृत्यु के पश्चात इसका पुत्र माधोसिंह द्वितीय का शासन 1880-1922 तक रहा, माधोसिंह द्वितीय के शासन काल में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्थापक पं. मदन मोहन मालवीय का आगमन जयपुर में हुआ माधोसिंह द्वितीय ने इनके आगमन पर इनका भव्य स्वागत किया तथा बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के लिए 5 लाख रूपए प्रदान किए।
- राजपूताना में सर्वप्रथम पोस्टकार्ड एवं डाक टिकटों का प्रचलन 1904 में जयपुर रियासत में ही हुआ।
- **भारत की आजादी के समय तथा राजस्थान के एकीकरण के समय (30 मार्च, 1949) जयपुर के शासक मानसिंह द्वितीय थे।**
- मानसिंह द्वितीय के शासन काल में ही जयपुर के आधुनिक निर्माता के रूप में मिर्जा स्माइल को याद किया जाता है, जो महाराजा मानसिंह द्वितीय के शासनकाल में प्रधानमंत्री थे।

राजपूत राज्यों के साथ 1818 ई. से पूर्व की संधियाँ

1. सर्वप्रथम 1781 ई. में जोधपुर के शासक विजयसिंह ने अंग्रेजों से संधि करने का प्रयास किया। तत्पश्चात् 1786 ई. में जोधपुर महाराजा प्रतापसिंह एवं 1795 में कोटा के शासक ने भी मराठों के विरुद्ध अंग्रेजों से संधि करने का प्रयास किया, मगर असफल रहे।
2. उत्तर भारत के राज्यों में सर्वप्रथम भरतपुर के महाराजा रणजीतसिंह ने 29 सितम्बर, 1803 को अंग्रेजों के साथ संधि की।
3. नवम्बर 1803 में अलवर के शासक बख्तावरसिंह व दिसम्बर, 1803 में जयपुर के शासक जगतसिंह ने भी अंग्रेज कम्पनी के साथ संधियाँ की। 1804 में धौलपुर के शासक कीरतसिंह ने भी कम्पनी के साथ संधि की। इन संधियों के समय अंग्रेज कम्पनी का गवर्नर जनरल लार्ड वेलेजली था।
4. वेलेजली के उत्तराधिकारी जार्ज बालों ने भरतपुर एवं अलवर के साथ हुई संधियों को छोड़कर शेष राज्यों के साथ हुई संधियों को रद्द कर दिया।

5. 1818 ई. की संधियों के दौरान राजपूत राज्य : एक दृष्टि

क्र. सं.	संधिकर्त्ता राज्य	संधि के समय शासक	संधि की तिथि	अंग्रेज कम्पनी को दी जाने वाली खिराज राशि
1.	करौली	हरबक्षपालसिंह	9 नवम्बर, 1817	खिराज से मुक्त
2.	टोंक	अमीर खाँ	15 नवम्बर, 1817	-
3.	कोटा	उम्मेद सिंह	26 दिसम्बर, 1817	2,44,700 रु.
4.	जोधपुर	मानसिंह	6 जनवरी, 1818	1,08,000 रु.
5.	उदयपुर	भीमसिंह	22 जनवरी, 1818	राज्य की आय का 1/4 भाग
6.	बून्दी	विसनसिंह	10 फरवरी, 1818	80,000 रु.
7.	बीकानेर	सूरतसिंह	21 मार्च, 1818	मराठों को खिराज नहीं देता था, इसलिए खिराज से मुक्त
8.	किशनगढ़	कल्याणसिंह	7 अप्रैल, 1818	खिराज से मुक्त
9.	जयपुर	जगतसिंह	15 अप्रैल, 1818	संधि के प्रथम वर्ष कुछ नहीं, दूसरे वर्ष 4 लाख, चौथे वर्ष 6 लाख, पाँचवें वर्ष 7 लाख, छठें वर्ष 8

क्र. सं.	संधिकर्त्ता राज्य	संधि के समय शासक	संधि की तिथि	अंग्रेज कम्पनी को दी जाने वाली खिराज राशि
				लाख फिर 8 लाख निश्चित।
10.	जैसलमेर	मूलराज	2 जनवरी, 1819	मराठों को खिराज नहीं देता था, अतः खिराज से मुक्त।
11.	प्रतापगढ़	सामन्तसिंह	5 अक्टूबर, 1818	धार राज्य को दिया जाने वाला खिराज अब कम्पनी को।
12.	डूँगरपुर	जसवन्तसिंह द्वितीय	1818 ई.	धार राज्य को दिया जाने वाला खिराज अब कम्पनी को।
13.	बाँसवाड़ा	उम्मेदसिंह	25 दिसम्बर, 1818	धार राज्य को दिया जाने वाला खिराज अब कम्पनी को।
14.	सिरोही	शिवसिंह	11 सितम्बर, 1823	संधि के तीन वर्ष तक खिराज से मुक्त उसके बाद आय के प्रति रुपये पर छः आना।
15.	झालावाड़	मदनसिंह	10 अप्रैल, 1838	80,000 रु. वार्षिक।

1857 की क्रांति

- रानी - विक्टोरिया
- ब्रिटिश प्रधानमंत्री - पार्मस्टन
- गवर्नर जनरल - लार्ड कैनिंग
- कमांडर-इन-चीफ - अँन्सन (करनाल में कालरा से मृत्यु) बनाई को बनाते
- एजेन्ट टू गवर्नर जनरल - पैट्रिक लॉरेंस
- राजपूताने की सेना का सर्वोच्च कमांडेंट - पैट्रिक लॉरेंस

क्रांति के कारण

- अंग्रेजों अधिकारियों के द्वारा राज्यों के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप।
- अंग्रेजों राजा के विरुद्ध षड्यंत्र व गुटबंदी को प्रोत्साहन देना।
- राजपूताने की जनता ब्रिटिश सर्वोपरिता के प्रतीक कम्पनी के अधिकारियों से घृणा करने लगी जबकि डूंगजी व जवाहरजी जैसे शेखावटी के डाकू उनके नायक थे।

• 1857 ई. की क्रांति के समय रियासतें एवं शासक

रियासत	पॉलीटिकल एजेन्ट	शासक
उदयपुर	कैप्टन शॉवर्स	स्वरूपसिंह
कोटा	मेजर बर्टन	महाराव रामसिंह II
जयपुर	ईडन	महाराजा रामसिंह
जोधपुर	मैक मॉसन	तख्तसिंह

भरतपुर	मॉरीसन	जसवंतसिंह (नाबालिग)
सिरोही	जे. डी. हॉल	शिवसिंह
करौली		मदनपालसिंह
अलवर		बन्नेसिंह
टोंक		वजीरुद्दौला
बाँसवाड़ा		लक्ष्मणसिंह
झालावाड़		पृथ्वीसिंह

1857 के विद्रोह के समय राजस्थान में छः सैनिक छावनियाँ थीं

- | | | |
|----|-------------------|-------------------------------|
| 1. | नसीराबाद (अजमेर) | बंगाल नेटिव इन्फेन्ट्री |
| 2. | नीमच (M.P.) | - |
| 3. | देबली (टोंक) | कोटा कन्टिन्जेंट |
| 4. | ऐरिनपुरा (पाली) | जोधपुर लीजन |
| 5. | खैरवाड़ा (उदयपुर) | मेवाड़ भील कोर (1841 में गठन) |
| 6. | ब्यावर (अजमेर) | मेर रेजिमेंट |

- 1857 की क्रांति के समय राजस्थान की छः सैनिक छावनियों में सभी सैनिक भारतीय थे कोई यूरोपीयन सैनिक नहीं था। अतः डीसा से यूरोपीयन रेजीमेंट को बुलाया गया। खैरवाड़ा व

ब्यावर की छावनी के सैनिकों ने क्रांति में भाग नहीं लिया। **सबसे बड़ी व सबसे शक्तिशाली छावनी नसीराबाद थी।**

- **28 मई 1857 को राजस्थान में नसीराबाद में विद्रोह का प्रारंभ।** इस समय राजपूताना की प्रशासनिक राजानी अजमेर थी तथा अंग्रेजों का खजाना व शस्त्रागार अजमेर में था। पेंट्रिक लारेंस को मेरठ विद्रोह की सूचना मिली तब वह माडंट आबू था। लारेंस ने विद्रोहियों पर आक्रमण करने की अपेक्षा अजमेर की रक्षा को अधिक महत्व दिया क्योंकि वहाँ शस्त्रागार व सरकारी खजाना था। लेफ्टिनेंट काइनेल की देखरेख में मेर रेजीमेंट ने अजमेर नगर की रक्षा की।
- गोरों की हरमेजस्टीज इन्फेन्ट्री और 12 वी बम्बई इन्फेन्ट्री के अजमेर पहुँचने में वहाँ की स्थिति सुदृढ़ हो गई।

नसीराबाद

- कमिश्नर डीक्सन ने ब्यावर से मेर रेजीमेंट को अजमेर बुलाया, वहीं 15 वी बंगाल इन्फेन्ट्री के सैनिकों को अजमेर से हटाकर नसीराबाद भेज दिया जिससे सैनिकों में यह भावना उत्पन्न हो गई की मेरठ विद्रोह के बाद उन पर संदेह किया जा रहा है। अतः 15 वी बंगाल नेटिव इन्फेन्ट्री द्वारा 28 मई 1857 को विद्रोह किया। इसने अजमेर पर नियंत्रण न कर दिल्ली को प्रस्थान किया 18 जून दिल्ली पहुँची। दिल्ली स्वतन्त्रता संग्राम का केंद्र था। अतः उनकी आवश्यकता दिल्ली में अधिक थी।
- क्रांतिकारियों ने अंग्रेज अधिकारी-**स्पोटिस वुड व न्यूबरी** की हत्या कर दी।
- जोधपुर महाराज **तख्तसिंह ने मॉक मेसन** के आदेशानुसार सेनानायक कुशलराज सिंघवी की कमान में जोधपुर की अश्वारोही सेना अजमेर के की रक्षार्थ भेजी। वहीं वाल्टर व हीथकोट ने मेवाड़ के सैनिकों की सहायता से इनका पीछा किया किंतु सफलता नहीं मिली।

नीमच - 3 जून 1857

- **नेतृत्व - हीरासिंह नामक सैनिक**
- ब्रिटिश अधिकारी कर्नल एबॉट द्वारा स्वामी भक्ति की शपथ लेने को कहा जिसे मुहम्मद अली बेग नामक सैनिक द्वारा चुनौती दी गई।
- नीमच छावनी के तत्कालीन सुपरिन्टेंडेंट **कैप्टन लॉयड** ने मेवाड़ के पॉलिटिकल एजेंट शावर्स से सहायता मांगी।
- नीमच विद्रोह के बाद वहाँ से भागे अंग्रेजों ने **डूंगला नामक गाँव में रूगाराम** नामक किसान ने उन्हें शरण दी। शावर्स अपनी सेना के साथ वहाँ पहुँच गया तथा महाराणा स्वरूपसिंह ने अंग्रेज स्त्रियों व बालकों को जगमंदिर में आश्रय दिया।
- 6 जून 1857 को कोटा, बूंदी व मेवाड़ की सेनाओं की मदद से कैप्टन शावर्स पुनः नीमच पर अंग्रेजों का अधिकार कर लिया।

- नीमच की विद्रोही सेना शाहपुरा, देवली होते हुए आगरा की ओर अग्रसर हुई।

देवली -

यहाँ कोटा कन्टिन्जेंट ने जून 1857 में विद्रोह किया

- नेतृत्व :- मीर आलम खाँ
- नीमच के सैनिकों द्वारा देवली को आग के हवाले कर दिया तथा ब्रिटिश अधिकारियों ने जहाजपुरा (भीलवाड़ा) में शरण ली। टोंक नवाब वजीरुद्दौला अंग्रेज भक्त था। टोंक सैनिकों ने नीमच के क्रांतिकारियों को आगरा जाते समय टोंक आमंत्रित किया तथा भव्य स्वागत किया। टोंक नवाब का मामा मीर आलम खाँ अंग्रेज विरोधी था तथा उसने खुलकर अंग्रेजों का विरोध किया। टोंक की सेना व जनता ने तात्या टोपे की भी सहायता की। टोंक विद्रोह में महिलाओं ने भी भाग लिया था।

एरिनपुरा

- जोधपुर लीजन द्वारा 21 अगस्त 1857 को मोती खाँ, तिलकराम तथा शीतल प्रसाद के नेतृत्व में विद्रोह किया तथा 'चलो दिल्ली मारो फिरंगी' नारे के साथ दिल्ली प्रस्थान किया। आउवा के ठाकुर कुशलसिंह चम्पावत विद्रोहियों का नेतृत्व स्वीकार करते हैं।
- आसोप (शिवनाथ सिंह) आलणियावास (अजित सिंह), लाम्बिया, बन्तावास, रूदावास और गुलर के जागीरदार भी अपनी-अपनी सेना के साथ क्रांतिकारियों में आ मिलते हैं।

कुशलसिंह के नेतृत्व में क्रांतिकारियों का अंग्रेजों से दो युद्ध होते हैं-

- **बिठोडा का युद्ध-** 8 सितम्बर 1857 के युद्ध में तख्तसिंह ने किलेंदार अनोड़ासिंह पंवार मारा जाता है।
- **चेलावासा का युद्ध -** (18 सितम्बर 1857) इसे काले-गोरे का युद्ध कहते हैं। मैक मॉसन की हत्या कर उसका सर किले पर लटका देते हैं।
- लार्ड कैनिंग ने ब्रिगेडियर होम्स के नेतृत्व में एक विशाल सेना भेजी जिसने 24 जनवरी 1858 को आउवा पर अधिकार कर लिया। आउवा में कल्लेआम किया गया तथा सुगाली माता की भव्य मूर्ति अजमेर लाया गया। सुगाली माता के 10 सिर व 54 हाथ हैं वर्तमान में पाली संग्रहालय में हैं।
- कुशलसिंह को कोठारिया के रावत जोधसिंह ने शरण दी तथा सलुम्बर के रावत केसरीसिंह ने भी सहायता की।
- कुशलसिंह के विद्रोह की जाँच के लिए **टेलर आयोग** गठित किया जाता है जो इन्हें दोषमुक्त कर देता है।

कोटा में विद्रोह (15 अक्टूबर 1857) -

- नेतृत्व :- **जयदयाल (मथुरा) पूर्ववकील कोटा महाराव का मेहराब खाँ** (करौली) सेना में रिसालदार।
- आगरा के निकट नियुक्त कोटा कन्टिन्जेन्ट की एक टुकड़ी विद्रोह कर देती है। इसकी सूचना कोटा पहुंचने पर कोटा राज्य की सेना तथा कोटा कन्टिन्जेन्ट के सैनिकों में हलचल उत्पन्न हो गई।
- यहाँ राजकीय सेना व आम जनता ने विद्रोह किया। शासक को नजरबन्द कर शासन की बागडोर अपने हाथ में ले ली तथा **ब्रिटिश डॉक्टर-सेल्डर व काण्टम की एवं पॉलिटिकल एजेंट बर्टन व उसके दोनों पुत्र (फ्रेंक व आर्थर) की** हत्या कर दी। बर्टन का सिर शहर में घुमाया गया और फिर तोप से उड़ा दिया। भारतीय ईसाई शैविल की भी हत्या कर दी।
- लगभग छः महिनों तक कोटा पर विप्लवकारियों का नियंत्रण बना रहा। करौली, शासक मदनपाल ने कोटा की सहायतार्थ सेना भेजी तथा कोटा का एक हिस्सा विप्लवकारियों से मुक्त कर दिया।
- मेजर जनरल P. राबर्ट्स 30 मार्च 1858 को कोटा को विप्लवकारियों से मुक्त करवा दिया।
- बूंदी के राजकवि सूर्यमल्ल मिश्रण ने कोटा में अंग्रेजी सेना द्वारा प्रतिशोध पूर्वक की गई कारवाई का हृदय विदारक विवरण प्रस्तुत किया।
- बर्टन की रक्षा में तथाकथित लापरवाही बरतने के अपराध में महाराव की तोपों की सलामी की संख्या 17 से 13 कर दी। सहायता के बदले करौली के मदनपाल को अंग्रेजों ने 17 तोपों की सलामी और C.I. की उपाधि में विभूषित किया।

धौलपुर - शासक भगवन्तसिंह

- **धौलपुर एकमात्र रियासत जहाँ विद्रोह की कमान राज्य के बाहर के क्रांतिकारियों** (इन्दौर व ग्वालियर) के हाथों में थी। विद्रोहियों ने 2 महिनों तक राज्य पर अधिकार बनाए रखा। पटियाला की सेना ने राज्य को विद्रोहियों से मुक्त कराया।
- नेतृत्व :- राव रामचन्द्र व हीरालाल

भरतपुर

- शासक :- नाबालिग जसवंतसिंह था अतः राज्य का शासन A. मेजर मॉरिसन के हाथों में था।
- भरतपुर की सेना तांत्या टोपे का मुकाबला करने के लिए अंग्रेज सेना की सहायतार्थ दौसा भेजी गयी। उधर भरतपुर के मेव और गुर्जर विद्रोहियों से मिल गये। ऐसी स्थिति में मॉरिसन भरतपुर छोड़ भाग गया। गदर शांत होने के बाद मॉरिसन ने राज्य में पुनः अपना वर्चस्व स्थापित किया।
- अलवर के महाराज बत्रेसिंह ने आगरा के किले में घिरे हुए अंग्रेजों की स्त्रियों व बच्चों की सहायता के लिए अपनी सेना और तोपखाना भेजा।

तात्या टोपे :-

- पूना के पेशवा नाना साहब का सहयोगी कानपूर में विद्रोह का नेतृत्व किया। तात्या टोपे दो बार राजस्थान आये।
- **8 अगस्त 1858** - माण्डलगढ़ (भीलवाड़ा) आगमन, कुआड़ा युद्ध कोठारी नदी के किनारे तात्याटोपे राबर्टसन के सेना में युद्ध हुआ जिसमें तात्या पराजित हुए।
- नाथद्वारा में श्रीनाथ जी के दर्शन किये।
- तात्या टोपे ने उस जमाने में भीलवाड़ा में एक-एक रोटी का एक एक रूपया दिया। उसके सैनिकों के सिर पर पगडियों के अभाव में महिलाओं की साड़ियाँ बंधी हुई थी।

दूसरी बार दिसम्बर 1858 में आगमन (मेवाड़, बाँसवाड़ा, प्रतापगढ़, टोंक)

- **हम्मीरगढ़ युद्ध में** (टोंक) तात्या टोपे टोंक नवाब वजीरुद्दौला को पराजित करते हैं तथा नवाब को हम्मीरगढ़ में नजरबन्द कर देते हैं। टोंक के जागीरदार नासीर मुहम्मद खां ने तात्या टोपे का साथ दिया।
- तात्या टोपे ने झालावाड़ के शासक पृथ्वीसिंह के महल को घेर लिया उनसे 5 लाख रू. लिये तथा झालावाड़ पर अधिकार कर लिया। पृथ्वीराज महल से भागकर मऊ में शरण ली। तात्या टोपे ने बाँसवाड़ा पर भी अधिकार किया था।
- सलूमबर के रावत केसरीसिंह से तात्या टोपे को आवश्यक रसद सामग्री उपलब्ध हुई।
- **तात्या टोपे का अंतिम युद्ध-अंग्रेजों से 31 जून 1859 को दौसा में हुआ।**
- तात्या के छः सौ सैनिकों ने बीकानेर महाराज सरदार सिंह के समक्ष आत्मसमर्पण कर दिया। सरदार सिंह ने ब्रिटिश सरकार से अनुरोध कर इन सैनिकों को क्षमा दिलवा दी।
- तात्या टोपे के सहयोगी नरवर के जागीरदार ;डण्णद्ध मानसिंह नरूका ने विश्वासघात कर तात्या कोटा के निकट जंगल में सोते हुए पकड़ कर अंग्रेजों को सांप दिया। **18 अप्रैल 1859 सिप्री (ग्वालियर) में राजद्रोह के अपराध में फांसी दी गई।**
- ब्रिटिश पदाधिकारी केप्टिन शावर्स ने अपनी पुस्तक में तात्या को फांसी देने के लिए सरकार की कटू आलोचना की है। उसका कहना है कि तात्या ब्रिटिश राज्य का नागरिक व निवासी नहीं था। उस पर देशद्रोह का अपराध
- लगाना कहाँ तक न्यायोचित कहा जा सकता है ? तथा ब्रिटिश सरकार द्वारा घोषणा के अनुसार उन सभी विप्लवकारियों को क्षमा प्रदान करने का वादा किया जिन्होंने अंग्रेजों की हत्या करने में भाग नहीं लिया था। तात्या पर किसी भी अंग्रेज की हत्या करने का आरोप नहीं था, फिर भी उसे फांसी का दण्ड दिया गया।
- तात्या टोपे जैसलमेर के अलावा राज्य की प्रत्येक रियासत में घूमा था। प्रतापगढ़ से तीन-चार हजार भील तात्या टोपे के साथ हो गये थे।

विविध तथ्य

- जयपुर एकमात्र रियासत, जहाँ की जनता ने भी अंग्रेजों का साथ दिया।
- अंग्रेजों का साथ देने के कारण जयपुर के रामसिंह प् को 'सितार हिंद' की उपाधि एवं कोटपुतली का परगना दिया।
- जयपुर में क्रांति के दौरान कोई हिंसक घटना नहीं हुई।
- क्रांति के दौरान विद्रोहियों ने राजपूतानों की छह रियासतों पर अधिकार कर लिया था- धौलपुर, भरतपुर, टोंक, कोटा, झालावाड़, बाँसवाड़ा।
- करौली के शासक मदनपाल के क्रांति के दमन हेतु अपनी सम्पूर्ण सेना अंग्रेजों को सौंप दी और नई सेना की भर्ती की।
- मुंशी जीवनलाल की डायरी से ज्ञात होता है कि टोंक के छः सौ मुजाहिद दिल्ली में मुगल बादशाह की सेवा में उपस्थित हुए।
- मोहम्मद मुजीब ने अपने नाटक आजमाइस में लिखा है कि 1857 के विप्लव में टोंक की स्त्रियों ने भी भाग लिया था।
- बूंदी के महाराव रामसिंह के अतिरिक्त राजस्थान के अन्य सभी नरेशों ने विप्लव को दबाने में अंग्रेजों को पूर्ण सहयोग प्रदान किया था।
- सलूमबर के रावत केसरीसिंह के मध्यप्रदेश के विद्रोही नेताओं से सम्पर्क था तथा मध्य भारत के विद्रोही नेता राव साहब को अपने यहाँ शरण दी।
- कोठारिया के रावत जोधसिंह ने आउवा के ठाकुर कुशल सिंह को अपने यहाँ शरण दी, जिसकी प्रशंसा समकालीन चारणों ने अपनी कविताओं में की है।
- नाथूराम खड्गावत के अनुसार बिठूर के नाना साहब ने कोठारिया में शरण ली।
- पेशवा पाँडुरंग ने पत्र द्वारा जोधसिंह को विद्रोहियों को सहायता देने का आग्रह किया था।
- जोधसिंह ने भीमजी चारण को भी कोठारिया में शरण दी थी। भीमजी गंगापुर में तैनात ब्रिटिश पदाधिकारियों की सम्पत्ति लूटकर कोठारिया आया था।
- बीकानेर का शासक सरदार सिंह राजपूताने का एकमात्र ऐसा शासक था, जो क्रांति के दौरान-व्यक्तिगत रूप से अपनी सेना लेकर राजपुताना के बाहर पंजाब (बाडलू) तक विद्रोह के दमन के लिए गया। सहायता के बदले टिब्बी परगने के 41 गाँव उपहार में दिये।

- मेवाड़ शासक को केवल खिलअत से ही संतोष करना पड़ा। निम्बाहेड का परगना जो मेवाड़ का भाग था। गदर के दौरान अस्थायी तौर पर मेवाड़ को दिया गया किंतु गदर समाप्ति बाद पुनः टोंक के नवाब को दे दिया गया।
- टोंक के नवाब की तोपों की संख्या 15 से बढ़ाकर 17 कर दी।
- अमरचंद बांठिया (बीकानेर) 1857 की क्रांति का राजस्थान का प्रथम शहीद। झांसी को आर्थिक सहायता प्रदान की थी। 22 जून 1858 को ग्वालियर में फांसी दी।
- हेमू कालानी (सरदारशहर) 1857 की क्रांति का सबसे कम उम्र का शहीद था और टोंक में फांसी दी।
- झालावाड़ के पृथ्वीसिंह ने क्रांतिकारियों को पकड़ने में मदद देने वाले लोगों को ईनाम देने की घोषणा की। दिल्ली पर पुनः अधिकार हो जाने पर G.G. को बधाई दी व खुशियाँ मनाई।
- 1857 की क्रांति के बाद राजपूताना के सिक्कों पर बादशाह के स्थान पर विक्टोरिया का चित्र अंकित किया गया।
- राजस्थान के शासकों की निष्क्रिय अवस्था का चित्रण करते हुए सूर्यमल्ल मिश्रण ने लिखा है कि "जिस वन में राजेन्द्र, गेंडे और शूकर राह भूलकर भी नहीं जाते थे उसी वन में आज गीदड़ बड़ी तत्परता के साथ उत्पात मचा रहे हैं।

आदिवासी व किसान आंदोलन

आदिवासी आंदोलन

- **कर्नल टॉड ने "भीलों को वनपुत्र" बताया है।**

गोविन्दगिरी

- बाँसवाड़ा और डूंगरपुर क्षेत्र में आदिवासी को जगाने का काम गोविन्दगिरी ने किया था। गोविन्दगिरी का जन्म स्थान **बाँसिया** जिला डूंगरपुर। गोविन्दगिरी के गुरु राजगिरी थे।
- गोविन्दगुरु को **"आदिवासियों का दयानन्द सरस्वती"** भी कहा जाता है। गोविन्दगुरु ने 1883 ई. में सम्प सभा बनायी थी। इनकी 10 प्रमुख शिक्षाएँ हैं गोविन्दगिरी की जाति बंजारा थी और इनके आंदोलन कि सबसे महत्वपूर्ण घटना 17 नवंबर 1913 को मानगढ़ (बाँसवाड़ा) हत्याकांड हुआ। मानगढ़ को राजस्थान को जलियावाला बाग भी कहा जाता है जिसमें 1500 आदिवासी शहीद हुए थे।
- गोविन्द गुरु का अंतिम समय **कम्बोई गुजरात** में व्यतीत हुआ था।
- गोविन्दगुरु ने 1910 में **लसाड़िया पंथ** बनाया था।

मोतीलाल तेजावत

- **जन्मस्थान कोलयारी** (उदयपुर) झाड़ोल-फलासिया क्षेत्र जाति-ओसवाल,
- **उपाधियाँ** - "आदिवासियों का मसीहा, बावजी, आदिवासियों के लिए गाँधीजी का दूत"।
- मोतीलाल तेजावत का आन्दोलन **एकी आन्दोलन** कहलाता है। 1921 ई. में वैशाख पूर्णिमा के दिन मातृकुण्डिया चित्तौड़ से एकी आन्दोलन प्रारम्भ होता है मेवाड़ के महाराणा फतेह सिंह को प्रस्तुत 21 सूत्री मांग पर मेवाड़ की पुकार" कहलाता है।
- नीमणा गुजरात में सभा के दौरान पुलिस गोला बारी में 1200 आदिवासी के शहीद होने को आदिवासी इतिहास का जलियावाला बाग कहते हैं। मोतीलाल तेजावत वहाँ से सिरोही भाग जाते हैं। सिरोही में बालोदिया व कुला गाँव के पास फिर से सामना होता है। पुलिस कार्रवाही में 50 आदिवासी शहीद होते हैं। इस घटना पर रामनारायण चौधरी ने रिपोर्ट प्रकाशित की थी।
- गाँधीजी के **दूत मणिभाई कोठारी** की सलाह पर मोतीलाल तेजावत खेड़ ब्रह्मा गुजरात में आत्म समर्पण कर देते हैं।

किसान आन्दोलन

- राजस्थान के किसान भू-राजस्व के अतिरिक्त ली जाने वाली लाग-बागों से परेशान थे। बिजोलिया क्षेत्र में 84 प्रकार की व मारवाड़ क्षेत्र में 123 प्रकार की ओर सीकर में 37 प्रकार की लाग बागे प्रचलित थी।
- बिजोलिया क्षेत्र में लड़की के विवाह पर 5 रुपया वसूली जाने वाली लाग "चँवरी लाग" थी। "तलवार बँधाई" उत्तराधिकारी शुल्क था जो कि जैसलमेर को छोड़कर सभी रियासते वसूल करती थी।

बिजोलिया किसान आन्दोलन

- बिजोलिया किसान आन्दोलन 1897 से 1941 तक चला कुल 44 वर्ष तक यह आन्दोलन चला था। बिजोलिया की जागीर का संस्थापक जगमेर का अशोक परमार था।
- बिजोलिया में अधिकांश किसान धाकड़ जाति के थे।
- बिजोलिया किसान आन्दोलन का **जन्मदाता साधु सीतारामदास** को माना जाता है।
- राजस्थान में किसान आन्दोलन का जन्मदाता विजयसिंह को माना जाता है। साधु सीता रामदास ने 1913 में बिजोलिया मित्रमण्डली बनायी थी।
- 1917 में श्री मन्ना पटेल की अध्यक्षता में विजयसिंह पथिक ने **उपरमाल पंच बोर्ड** बनाया। विजयसिंह पथिक ने 1919 में वर्द्धा महाराष्ट्र में राजस्थान सेवा संघ बनाया था।
- नंद जी पटेल और ठाकरी पटेल ने जागीरदार कृष्ण सिंह की शिकायत मेवाड़ के महाराणा फतेह सिंह को की थी। हामीद हुसैन ने महाराणा को किसानों की शिकायत सौंपी थी।
- आन्दोलन का दूसरा चरण सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है जिसके नेता विजयसिंह पथिक थे। विजयसिंह पथिक वास्तविक नाम भूपसिंह था इनका जन्म स्थान गुढावली बुलन्द शहर उत्तर

प्रदेश (P.)। 1917 में ऊपरमाल पंचबोर्ड- 1919 में राजस्थान सेवा संघ की स्थापना की। इन्होंने वर्द्धा से "राजस्थान केसरी" और अजमेर से "नवीन राजस्थान" समाचार पत्र प्रकाशित किये थे। नवीन राजस्थान का नाम जयनारायण व्यास ने तरुण राजस्थान कर दिया था।

- मेवाड़ के महाराणा फतेहसिंह ने **बिंदुलाल भट्टाचार्य** आयोग बनाया था।
- G.G. **हॉलेण्ड और विलकिन्सन** के प्रयासों से 1922 में यह आन्दोलन समाप्त हो जाता है। किसानों के प्रतिनिधि के रूप में माणिक्यलाल वर्मा हस्ताक्षर करते हैं। आन्दोलन के तीसरे चरण में हरिभाऊ उपाध्याय, जमनालाल बजाज और माणिक्यलाल वर्मा नेतृत्व करते हैं।
- **तीसरा चरण** - बाराणी जमीन की किसानों से सम्बन्धित था। इस चरण में मूल बाकीदार किसानों को उनकी जमीनें लौटाने से सम्बन्धित था। इस चरण के नेता माणिक्यलाल वर्मा, जमनालाल बजाज आदि थे। 1941 के वर्ष मूल बारजीदार किसानों को उनकी जमीनें फिर से प्राप्त हो जाती हैं और आन्दोलन समाप्त होता है।
- इस किसान आंदोलन को सफल बनाने में सर्वाधिक योगदान कानपुर से प्रकाशित गणेश शंकर विद्यार्थी के प्रताप समाचार पत्र ने दिया था।

बैगू आन्दोलन

1. **बैगू- चित्तौड़ (वर्तमान स्थान)**
 2. जाति - धाकड़
 3. रियासत - मेवाड़
- किसान आन्दोलन के नेता विजयसिंह पथिक, रामनारायण चौधरी और राजस्थान सेवा संघ।
 - जागीरदार - अनुपसिंह।
 - अंग्रेजी सरकार ने जागीरदार व किसानों के बीच हुए समझौते को **बोल्शेविक समझौता** कहकर रद्द कर दिया था।
 - **ट्रेंच आयोग** का सम्बन्ध बैगू से है। जिसकी पुलिस कार्यवाही में रूपा जी और कृपा जी शहीद हुए थे।

अलवर किसान आन्दोलन

- **अलवर राजस्थान की पहली रियासत थी जिसने हिन्दी को राजभाषा बनाया था।**
- अलवर के किसान राजपूत जाति के थे और भू राजस्व वृद्धि का विरोध कर रहे थे। अलवर किसान आन्दोलन कि सबसे महत्वपूर्ण घटना **निमूचणा काण्ड** है। 14 मई, 1925 को सैनिक अधिकारी छाजूसिंह के द्वारा की गई सैनिक कार्यवाही में 100 किसान शहीद हुए थे। गाँधीजी ने इस घटना को जलियावाला बाग से भी विभत्स या डबल डायरिज्म डिस्टिल्ड बताया था। उस समय अलवर का शासक जयसिंह था।

बीकानेर का किसान आंदोलन

- बीकानेर क्षेत्र में 1921 में जमीनदार संघ का गठन किया गया था। बीकानेर के जागीर क्षेत्रों में चुरू जले का दुधुवा खारा किसान सत्याग्रह प्रसिद्ध है। दुधुवा खारा जिले चुरू में किसान-आन्दोलन का नेतृत्व मगाराम एवं हनुमानसिंह ने किया था।

बरड़ क्षेत्र किसान आन्दोलन

प्रमुख नेता नयनूराम शर्मा, हरिभाहि किंकर, सबसे महत्वपूर्ण घटना - डाबीकांड था जिसमें नानक भील शहीद हुए।

बीकानेर में तिरंगे के लिए रायसिंह नगर में बीरबल सिंह शहीद हुआ था। बीकानेर दिवस 6 जुलाई 1946 को मनाया गया था।

करौली क्षेत्र में किसान आन्दोलन का नेतृत्व कुँवर मदनसिंह ने किया था। उनके मांग थी कि करौली की राजभाषाहिंदी बनायी जाये।

सीकर किसान आंदोलन

सीकर जयपुर राज्य का एक बड़ा ठिकाना था। सन् 1922 ई में ठाकुर **कल्याण सिंह** सीकर का राव राजा बना। उसकी नीति किसानों से अधिक कर वसूल करने की थी उसने कर कि दरों को अत्यधिक बढ़ा दिया था। 1923 ई. में वर्षा कम होने पर भी उसने लगान दरों को कम नहीं किया इस पर किसानों ने जयपुर महाराज से शिकायत की किंतु जयपुर राजा के कहने के बाद भी जब दरों में कमी नहीं की गई तब **भारत की केंद्रीय कि असेम्बली एवं इंग्लैण्ड के हाउस ऑफ कामन्स** में सीकर संबंधी प्रश्न उठाये गये तब एक जाचँ, आयोग कि नियुक्ति की गई। आयोग ने उपज के आधार पर लगान लेने की सिफारिश की तब रावराजा ने चालाकी से सर्वेक्षण के समय जरीब छोटा करवा दिया ताकि बीघों की संख्या बढ़ जाय एवं लगान अधिक निश्चित हो जाये। किसानों को जब इसका पता चला तो उन्होंने इसका विरोध किया तथा आंदोलन का संचालन करने के लिए **1931 ई. में राजस्थान जाट क्षेत्रीय सभाकी स्थापना** की एवं लंबे संघर्ष के बाद किसान अपनी माँगे मनवाने में सफल हुए। जयपुर से किसानों कि समस्या का समाधान करने के लिए कैप्टन वेब को भेजा गया था जिनके द्वारा कराया गया समझौता ठाकुर ने लागू नहीं करवाया।

शेखावटी आंदोलन

सीकर की तरह शेखावटी क्षेत्र के जागीरदार भी किसानों पर अत्याचार करने में पीछे नहीं रहे। विशेषतः **नवलगढ़, मंडावा, झुंडलोद, बिसाऊ, एवं मालासर इन्हें पंचपाणे** कहते थे। यहां के किसानों ने भी मनमानी लगान वृद्धि के विरुद्ध आंदोलन किया था। **1912 में चिडावा में मास्टर कालीचरण शर्मा ने सेवा समिति** का गठन किया। जयपुर राज्य ने कालीचरण एवं प्यारेलाल को बंदी बना लिया जिसका काफी विरोध भी हुआ था। साथ ही इन ठिकानेदारों के विरुद्ध किसानों ने सर्वप्रथम 1924 ई. में जयपुर राज्य में शिकायत करते हुए लगान देने से साफ मना कर दिया, इस पर कई ठिकानेदारों ने हिंसा भी की। रामनारायण चौधरी

को यह बात मालूम हुई तो वे वहाँ जाने लगे तो उनके जाने पर रोक लगा दी। 1934 में गुमानपुरा गाँव जला दिया गया। डूँडलोद ठाकुर ने भी जयसिंहपुरा गाँव पर निर्मम अत्याचार किये बाद में सरकार के हस्तक्षेप एवं स्वतंत्रता पश्चात ही समस्या का स्थाई समाधान हो पाया।

राजस्थान में जागीरदा प्रथा के विरुद्ध जनमत तैयार करने में इस आंदोलन का महत्वपूर्ण योगदान रहा था। जाट-राजपूत वैमनस्यता जो हमें सीकर व शेखावटी के किसान आंदोलनों में दिखाई देती है, वह इसी जागारदारी प्रथा की ही देन समझी जान चाहिए। इस आंदोलन के प्रमुख नेता थे- सरदार हरलाल सिंह, नेतराम सिंह, तारकेश्वर व नरोत्तमलाल जोशी।

प्रजामंडल आन्दोलन

यहाँ भूमि बंदोबस्तटीकाराम पालीवाल के नेतृत्व में हुआ।

शेष भारत के अनुरूप राजस्थान में भी अंग्रेजों, निरकुंश राजतंत्र तथा अत्याचारी सामन्तों के प्रति घोर असन्तोष व्याप्त था। उनके असन्तोष को मूर्तरूप देने के लिए संगठन की आवश्यकता थी। वैसे राजस्थान में 20वीं शताब्दी के प्रारम्भ में संगठनों तथा संस्थाओं का निर्माण होने लग गया था। लेकिन **1919 ई. में राजस्थान सेवा संघ** के स्थापित हो जाने से जनता की अभिव्यक्ति के लिए एक सशक्त माध्यम मिल गया। 1920 से 1929 तक राजस्थान में होने वाले कृषक आन्दोलन का नेतृत्व इसी संघ के द्वारा किया गया था। 1919 ई. में अन्य महत्वपूर्ण संगठन का निर्माण हुआ, जिसका नाम "**राजपूताना-मध्यभारत सभा**" रखा गया। इस सभा का उद्देश्य शासकों और सामन्ती जुल्मों के विरुद्ध आवाज उठाना था। संगठन निर्माण की प्रक्रिया में 1927 में उठाया गया जब **अखिलभारतीय देशी राज्य लोक परिषद्** का निर्माण किया गया। परन्तु राजस्थान के विभिन्न राज्यों में ऐसे संगठन का अभाव था जिसका ध्येय पूरी रियासत हो। इतना ही नहीं अखिल भारतीय कांग्रेस भी रियासतों के मामलों में उदासीन ही रही किन्तु **हरिपुरा कांग्रेस** में स्थिति में परिवर्तन आया और 1938 के इस अधिवेशन में रियासती जनता को भी अपने-अपने राज्य में संगठन निर्माण करने तथा अपने अधिकारों के लिए आन्दोलन करने की छूट दे दी परिणामस्वरूप राजस्थान के विभिन्न राज्यों में प्रजामंडलों की स्थापना हुई। अब राजस्थानी रियासतों का आन्दोलन मुख्यतः इसी संस्था के नेतृत्व में लड़ा जाने लगा।

मेवाड़ में प्रजामंडल आंदोलन

- उदयपुर में प्रजामंडल आंदोलन की स्थापना का श्रेय **श्री माणिक्यलाल वर्मा** को जाता है। 24 अप्रैल, 1938 को श्री बलवन्तसिंह मेहता की अध्यक्षता में मेवाड़ प्रजामण्डल की स्थापना की। प्रजामण्डल की स्थापना के समाचारों से मेवाड़ की जनता में अभूतपूर्व उत्साह का संचार हुआ, परंतु जैसे ही मेवाड़ सरकार को इसकी सूचना मिली, सरकार ने श्री वर्माजी को मेवाड़ से

निष्कासित कर दिया तथा बिना सरकार से आज्ञा लिए सभा, समारोह करने, संस्थाएँ बनाने एवं जुलूस निकालने पर प्रतिबन्ध लगा दिया।

- उदयपुर सरकार द्वारा मेवाड़ प्रजामण्डल को 24 सितम्बर, 1938 को गैर-कानूनी घोषित कर दिया गया, परंतु उसी दिन नाथद्वारा में निषेधाज्ञा के बावजूद कार्यकर्ताओं द्वारा विशाल जुलूस निकाल गया। प्रजामण्डल कार्यकर्ताओं ने सरकार को अल्टीमेटम दिया कि 4 अक्टूबर, 1938 तक प्रजामण्डल से प्रतिबन्ध नहीं हटाया गया तो सत्याग्रह प्रारंभ किया जाएगा।
- मेवाड़ सरकार ने प्रजामंडल नेताओं व कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार कर लिया। श्री भूरेलाल बया को सराड़ा किले (मेवाड़ का काला पानी) में नजरबंद कर दिया गया। विजयादशमी के दिन प्रजामंडल कार्यकर्ताओं ने सत्याग्रह प्रारंभ किया।
क्रांतिकारी **रमेशचन्द्र व्यास को पहला सत्याग्रही** बनकर गिरफ्तार होने का श्रेय प्राप्त हुआ। सत्याग्रहियों पर पुलिस दमन चक्र प्रारंभ हो गया। इसकी परवाह न करते हुए सत्याग्रहियों ने जगह-जगह जुलूस निकालें, आमसभाएँ की एवं सरकार की आलोचना की।
- श्री माणिक्यलाल वर्मा ने '**मेवाड़ का वर्तमान शासन**' नामक पुस्तिका छपवाकर वितरित करवाई जिसमें मेवाड़ व्याप्त अव्यवस्था एवं तानाशाही की आलोचना की गई। लोगों में जागृति लाने हेतु 'मेवाड़ प्रजामण्डल : मेवाड़वासियों से एक अपील' नामक पर्चे भी बाँटे गये। सरकार ने डाक पर सेंसर लगा दिया।
- 24 जनवरी, 1939 को श्री माणिक्यलाल वर्मा की पत्नी नारायणी देवी वर्मा एवं पुत्री को प्रजामंडल आंदोलन में भाग लेने के कारण राज्य से निष्कासित कर दिया गया।
- मेवाड़ में भयंकर अकाल पड़ने के कारण प्रजामंडल ने गाँधीजी के आदेश पर 3 मार्च, 1939 को सत्याग्रह स्थगित कर दिया गया। श्री वर्माजी का स्वास्थ्य खराब होने की खबर मिलने पर श्री जवाहर लाल नेहरू ने मेवाड़ सरकार को पत्र लिखा, तब 8 जनवरी, 1940 को उन्हें जेल से रिहा किया गया। इसके बाद प्रजामण्डल ने बेगार एवं बलेठ प्रथा के विरुद्ध अभियान चलाया फलस्वरूप मेवाड़ सरकार को इन दोनों, प्रथाओं पर रोक लगानी पड़ी। यह मेवाड़ प्रजामंडल की पहली नैतिक विजय थी।
- 22 फरवरी, 1941 को मेवाड़ प्रजामंडल पर से प्रतिबन्ध हटने के बाद प्रजामंडल ने सदस्यता अभियान प्रारंभ किया एवं 25-26 नवम्बर, 1941 को श्री माणिक्यलाल वर्मा की अध्यक्षता में पहला अधिवेशन आयोजित किया, जिसका **उद्घाटन आचार्य 'जे.बी. कृपलानी'** ने किया। अधिवेशन में अपार भीड़ के समक्ष राज्य में उत्तरदायी शासन की स्थापना, सरकार द्वारा प्रस्तावित धारा सभा में संशोधन एवं नागरिक अधिकारों की बहाली आदि प्रस्ताव पारित किए गए। इसके बाद मेवाड़ के प्रत्येक जिले एवं परगने में प्रजामंडल की शाखाएँ खोली गईं।
- मेवाड़ प्रजामंडल ने कांग्रेस द्वारा 9 अगस्त, 1942 को शुरू किये गये 'भारत छोड़ो आंदोलन' में सक्रिय रूप से भाग लेना प्रारंभ किया। 20 अगस्त, 1942 को प्रजामंडल की कार्यसमिति ने मेवाड़ महाराणा को पत्र द्वारा चेतावनी दी कि यदि 24 घंटे के भीतर महाराजा ब्रिटिश सरकार

से संबंध विच्छेद नहीं करते हैं तो जन आन्दोलन प्रारंभ किया जाएगा। सरकार द्वारा प्रजामंडल कार्यकारिणी के सदस्यों को गिरफ्तार कर लिया गया तथा 23 अगस्त से जुलूस आदि पर प्रतिबंध लगा दिए गये। सरकारी दमन चक्र प्रारंभ हो गया कार्यकर्ताओं ने सर्वत्र 'अंग्रेजों भारत छोड़ो' के नारे बुलन्द किए गये। स्त्रियों एवं छात्रों ने भी आंदोलन में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया। सरकार ने बड़ी संख्या में सत्याग्रहियों को गिरफ्तार कर लिया। नारायणी देवी वर्मा, उनकी पुत्री आदि कई महिलाओं को गिरफ्तार किया गया। मेवाड़ प्रजामंडल को मेवाड़ सरकार द्वारा वापस गैर-कानूनी घोषित कर दिया गया।

- प्रजामंडल ने भील सेवाकार्य, भील छात्रावास आदि कार्यों को पुनः प्रारंभ किया। ठक्कर बापा की सलाह से उचित योजना बनाई गई। मेवाड़ हरिजन सेवक संघ के कार्यों को पुनर्गठित कर वहाँ गृह उद्योगों का विकास किया गया।
- 31 दिसम्बर, 1945 एवं 1 जनवरी, 1946 को उदयपुर के सलेटिया मैदान में '**अखिल भारतीय देशी लोक राज्य परिषद् काछठा अधिवेशन पं. जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता** में हुआ जिसमें प्रस्ताव पारित कर देशी रियासतों के शासकों से बदलती राजतनीतिक परिस्थितियों के अनुरूप अविलंब उत्तरदायी शासन की स्थापना की अपील की गई।

मारवाड़ में प्रजामण्डल आंदोलन

- जोधपुर राज्य में उत्तरदायी शासन की स्थापना एवं नागरिक अधिकारों की माँग बीसवीं सदी के तीसरे दशक में जोर पकड़ने लगी। जागरूक कार्यकर्ताओं- जयनारायण व्यास, भँवरलाल सर्राफ, आनन्दराज सुराणा आदि ने इस हेतु **1920 में 'मारवाड़सेवा संघ'** नामक पहली राजनीतिक संस्था स्थापित की। परंतु इसके कुछ समय बाद ही निष्क्रिय हो जाने के कारण 1921 ई. में इसके स्थान पर 'मारवाड़ हितकारिणी सभा' का गठन हुआ। इसने समय-समय पर सरकार की जनविरोधी नतियों की आलोचना की एवं विरोध प्रकट किया।
- 11-12 अक्टूबर, 1929 को मारवाड़ हितकारिणी सभा का प्रथम अधिवेशन जोधपुर में आयोजित होना था परंतु जोधपुर सरकार ने इस पर प्रतिबंध लगा दिया एवं प्रमुख राजनीतिक नेताओं- जयनारायण व्यास, आनन्दराज सुराणा एवं भँवरलाल सर्राफ आदि को जेल में डाल दिया गया एवं अध्यादेश द्वारा सभा, जुलूस, धरने आदि पर प्रतिबंध लगा दिया।
- 10 मई, 1931 को जयनारायण व्यास आदि ने '**मारवाड़ यूथ लीग**' की स्थापना की।
- मारवाड़ राज्य लोक परिषद् की बैठक चांदकरण शारदा की अध्यक्षता में 24-25 नवम्बर, 1931 को पुष्कर (अजमेर) में हुई। कस्तूरबा गाँधी, काका कालेलकर आदि इसमें उपस्थिति थे। इस सम्मेलन ने मारवाड़ में राजनीतिक चेतना का प्रसार किया।
- सरकार ने 1932 में मारवाड़ हितकारिणी सभा एवं मारवाड़ यूथ लीग तथा बाल भारत सभा को अवैध घोषित कर दिया।

- 1934 में जयनारायण व्यास, आनन्दमल सुराणा आदि ने राज्य में उत्तरदायी सरकार की स्थापना एवं नागरिक अधिकारों की रक्षा करने के उद्देश्य से जोधपुर में 'जोधपुर प्रजामंडल' का गठन किया।
- कृष्णा दिवस मारवाड़ की कृष्णा कुमारी को न्याय दिलवाने के लिए 1935 में बंबई में मनाया गया था।
- 1936 में कराची में अखिल भारतीय देशी राज्य लोक परिषद् के अधिवेशन में जयनारायण व्यास को महामंत्री चुना गया। **श्रीव्यास ने बम्बई से अखण्ड भारत का सम्पादन प्रारंभ किया।**
- 1937 में दीपावली के दिन जोधपुर प्रजामंडल एवं सिविल लिबर्टीज यूनियन को अवैध घोषित कर दिया गया।
- 1938 के कांग्रेस के हरिपुरा अधिवेशन के बाद 16 मई, 1938 को जोधपुर में 'मारवाड़ लोक परिषद्' की स्थापना की गई, जिसका उद्देश्य महाराजा की छत्रछाया में उत्तरदायी सरकार की स्थापना करना था। फरवरी, 1939 में सरकार द्वारा जयनारायण व्यास पर लगाये गये प्रतिबंध हटाने के बाद वे जोधपुर आये एवं मारवाड़ में प्रजामंडल आंदोलन की बागडोर संभाली। व्यासजी पर से प्रतिबन्ध हटवाने में बीकानेर महाराजा गंगासिंह जी का बड़ा योगदान था।
- अप्रैल, 1940 में पं. जवाहरलाल नेहरू ने मारवाड़ की स्थिति के आकलन हेतु पं. द्वारकानाथ कचरू को जोधपुर भेजा जिन्होंने रिपोर्ट में जोधपुर के वातावरण को दम घोटने वाला बताया। महात्मा गाँधी ने भी मारवाड़ की स्थिति से क्षुब्ध होकर अपने पत्र 'हरिजन' में उसकी आलोचना की। परंतु सरकार का दमन चक्र तेज हो गया।
- 26 जून, 1940 को मारवाड़ लोक परिषद् एवं मारवाड़ शासन के मध्य समझौता हुआ जिसमें सरकार ने लोक परिषद् को जन प्रतिनिधि सभा के रूप में मान लिया एवं महाराजा की छत्रछाया में उत्तरदायी सरकार की स्थापना के उद्देश्य को स्वीकार कर लिया तथा कार्यकर्ताओं को रिहा कर दिया गया तब लोक परिषद् ने अपना आंदोलन समाप्त कर दिया। आंदोलन की अपूर्व सफलता ने लोक परिषद् के जीवन में नवीन चेतना एवं शक्ति का संचार किया। जून, 1940 में श्री जयनारायण व्यास को मारवाड़ लोक परिषद् का अध्यक्ष चुना गया। 28 मार्च, 1941 को मारवाड़ में उत्तरदायी शासन दिवस मनाया गया।
- 7-8 जून, 1941 को सरकार ने प्रथम बार जोधपुर नगरपालिका के चुनाव क्षेत्रीय आधार पर करवाये। लोक परिषद् को 22 में से 18 स्थानों पर जीत हासिल हुई एवं **श्री जयनारायण व्यास नगरपालिका के प्रथम निर्वाचित अध्यक्ष बने।**
- 26 जनवरी, 1942 को लोक परिषद् के तत्वावधान में स्वतन्त्रता दिवस मनाया गया। श्री व्यास ने नगरपालिका अध्यक्ष पद से इस्तीफा देकर राज्य में उत्तरदायी शासन की स्थापना हेतु संघर्ष को पुनः प्रारम्भ किया। उन्होंने '**उत्तरदायी शासन के लिए संघर्ष**' व '**संघर्ष क्यों**' ? आदि

पुस्तिकाएँ वितरित करवाई तथा 11 मई से दूसरा सत्याग्रह आरंभ किया गया। श्री बालमुकुन्द बिस्सा का जेल में अव्यवस्था व अन्याय के विरुद्ध भूख हड़ताल करने के कारण स्वास्थ्य खराब हो जाने से 19 जून, 1942 को मृत्यु हो गई। इसकी देश में सर्वत्र कड़ी प्रतिक्रिया हुई।

- लोक परिषद् के आंदोलन में मारवाड़ की महिलाएँ भी महिमा देवी किंकर के नेतृत्व में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही थी।
- 9 अगस्त, 1942 को गाँधी के भारत छोड़ो आंदोलन के प्रारंभ होने के कारण मारवाड़ में प्रजामंडल आंदोलन में और तेजी आ गई। परिषद् के कई नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया। जयनारायण व्यास की पुत्री रमादेवी, अचलेश्वर प्रसाद शर्मा की पत्नी कृष्णा कुमारी आदि के नेतृत्व में महिलाओं ने आंदोलन को बढ़ाया।
- देश में कैबिनेट मिशन योजना के तहत श्री जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में अंतरिम सरकार का गठन हुआ एवं देश **कीसंविधान सभा में जोधपुर से श्री सी.एस. वेंकटाचारी एवं श्री जयनारायण व्यास को प्रतिनिधि बनाकर भेजा गया।**
- 13 मार्च, 1947 को डीडवाना परगने के डाबड़ा गाँव में मारवाड़ लोक परिषद् के नेता मथुरादास माथुर, राधाकिशन बोहरा आदि किसान सम्मेलन को संबोधित करने हेतु गये। जागीरदारों ने अपने लठैतों के माध्यम से लोक परिषद् के कार्यकर्ताओं पर (श्री मोतीलाल चौधरी के घर पर) लाठियों व तेज धार वाले हथियारों से आक्रमण करवा दिया। श्री मोतीलाल के पिता व भाई सहित कई लोगों को मार दिया तथा कईयों को घायल कर दिया गया। डाबड़ा काण्ड की सर्वत्र निंदा की गई।
- 21 जून, 1947 को युवा एवं अनुभवहीन महाराजा हनुवन्त सिंह जोधपुर की गद्दी पर बैठे जो स्वयं उत्तरदायी सरकार के विरोधी थे। उनके सामंती मंत्रिमंडल के गठन के आदेशों के विरोध में **मारवाड़ लोक परिषद् ने 14 नवम्बर, 1947 को 'विधानसभाविरोध दिवस'** मनाया एवं 26 जनवरी, 1948 को मारवाड़ में उत्तरदायी शासन की स्थापना हेतु नया आन्दोलन प्रारंभ करने की घोषणा की, परंतु जैसलमेर की सीमा पर पाकिस्तान आक्रमण के कारण आंदोलन कुछ समय के लिए ढीला पड़ गया। 8 मार्च, 1948 से पुनः उत्तरदायी शासन की स्थापना हेतु आंदोलन की घोषणा की गई एवं श्री व्यास ने तुरंत उत्तरदायी लोकप्रिय सरकार के गठन की माँग की तथा 'मार्च से संघर्ष क्यों ?' पुस्तक प्रकाशित की। अन्ततः लोक नेताओं के निरन्तर विरोध एवं केन्द्र सरकार के दबाव के कारण जोधपुर महाराजा को झुकना पड़ा। 22 फरवरी, 1948 रियासती विभाग के सचिव श्री वी.पी. मेनन जोधपुर आये एवं उनके दबाव के फलस्वरूप 3 मार्च, 1948 को जयनारायण व्यास के प्रधानमंत्रित्व में एक मिली जुली लोकप्रिय सरकार का गठन किया गया। 30 मार्च, 1949 को जोधपुर रियासत का राजस्थान में विलय हो गया।

इस प्रकार प्रजामंडल आंदोलन अन्ततः राज्य में लोकप्रिय एवं उत्तरदायी सरकार की स्थापना करवाने में कामयाब हुआ।

जयपुर प्रजामंडल आंदोलन

- **जयपुर प्रजामंडल की स्थापना :**

1931 ई. में श्री कपूरचन्द पाटनी एवं श्री जमनालाल बजाज के प्रयासों से जयपुर जनसहयोग व उत्साही कार्यकर्ताओं के अभाव के कारण अगले पाँच वर्षों तक यह प्रजामंडल राजनैतिक दृष्टि से अधिक प्रभावी भूमिका नहीं निभा पाया एवं इस दौरान इसकी सम्पूर्ण गतिविधियाँ खादी उत्पादन एवं प्रचार जैसे रचनात्मक कार्यों तक ही सीमित रही।

- जयपुर राज्य प्रजामंडल का पुनर्गठन : 1931 ई. में स्थापित जयपुर प्रजामंडल को राजनैतिक क्षेत्र में अधिक प्रभावी भूमिका निभाने एवं जनता में राजनीतिक चेतना जाग्रत करने के उद्देश्य से 1936 ई. में सेठ जमनालाल बजाज के प्रयासों से व श्री हीरालाल शास्त्री के सहयोग से 'जयपुर राज्य प्रजामंडल' का पुनर्गठन किया गया। जयपुर के श्री चिरंजीलाल मिश्र को उसका अध्यक्ष तथा श्री शास्त्रीजी को उसका मंत्री बनाया गया। श्री कपूरचंद पाटनी, हरिशचन्द्र शर्मा, चिरंजीलाल अग्रवाल आदि भी उसकी कार्यकारिणी में थे। नवगठित प्रजामंडल ने 1937 से कार्य प्रारंभ किया।

- **सन् 1938 में श्री जमनालाल बजाज जयपुर प्रजामंडल के अध्यक्ष** निर्वाचित किये गये। उनकी अध्यक्षता में जयपुर में 8 व 9 मई, 1938 को प्रजामंडल का विशाल अधिवेशन हुआ। प्रतिबंध के बावजूद निकाले गये जुलूस में अत्यधिक संख्या में लोग शामिल हुए। 1938 में हीरालाल शास्त्री के प्रयासों से शेखावाटी किसान सभा, जो कई वर्षों से शेखावाटी के किसानों में राजनैतिक जाग्रति उत्पन्न कर ठिनेदारों के अत्याचारों के विरुद्ध संघर्ष कर रही थी, का विलय जयपुर प्रजामंडल में हो गया। किसान शक्ति के व्यापक समर्थन के जुड़ जाने से जयपुर प्रजामंडल की शक्ति एवं लोकप्रियता में असाधारण वृद्धि हुई।
- जयपुर राज्य में प्रशासन पर अंग्रेज अधिकारियों का नियंत्रण था। जयपुर सरकार ने जमनालाल बजाज के जयपुर राज्य में प्रवेश पर प्रतिबंध लगा दिया उन्होंने 1 फरवरी, 1939 को जयपुर राज्य में प्रवेश कर नागरिक अधिकारों की मांग पुरजोर शब्दों में रखने का निर्णय लिया। सरकार ने प्रजामंडल की मांगों पर विचार करने की बजाय प्रजामंडल को अवैध घोषित कर दिया एवं राज्य में प्रवेश करते समय 1 फरवरी, 1939 को श्री बजाज को तथा बाद में अन्य नेताओं को गिरफ्तार कर लिया। अवैध घोषित होने के बाद प्रजामंडल का कार्यालय आगरा स्थानांतरित कर दिया गया। 5 फरवरी, 1939 से सरकार की दमनकारी नीति के विरोध में प्रजामंडल ने सत्याग्रह प्रारंभ किया।
- प्रमुख नेताओं की गिरफ्तारी के बाद सत्याग्रह आंदोलन का संचालन बलवंत सांवलराम देशपाण्डे, गुलाबचन्द कासलीवाल, कपूरचन्द पाटनी, दौलतमल भण्डारी आदि नेताओं ने किया। 18 मार्च, 1939 को जयपुर में श्रीमती दुर्गावती देवी शर्मा के नेतृत्व में महिला सत्याग्रहियों के प्रथम जत्थे ने गिरफ्तारी दी।

- सरकार द्वारा प्रजामंडल को मान्यता प्रदान करने एवं कार्यकर्ताओं को रिहा करने का आश्वासन देने पर गाँधीजी के निर्देश से 18 मार्च, 1939 को सत्याग्रह स्थगित कर दिया गया। 2 अप्रैल, 1940 को प्रजामंडल एवं जयपुर सरकार के मध्य समझौता हो गया। इसके तहत प्रजामंडल को 2 अप्रैल को ही पंजीकृत कर लिया गया।
- **जेन्टलमेन्स एग्रीमेंट :** जयपुर प्रजामंडल के तत्कालीन अध्यक्ष श्री हीरालाल शास्त्री एवं रियासत के प्रधानमंत्री पर मिर्जा इस्माइल के मध्य 1942 में एक समझौता हुआ, जिसके तहत महाराजा ने राज-काज में जनता को शामिल करने की अपनी नीति का उल्लेख किया। प्रजामंडल इस उत्तर से संतुष्ट हो गया।
- **भारत छोड़ो आंदोलन एवं जयपुर प्रजामंडल :** हीरालाल शास्त्री एवं मिर्जा इस्माइल के मध्य 1942 में हुए समझौते से संतुष्ट होकर जयपुर प्रजामंडल के अध्यक्ष हीरालाल शास्त्री ने जयपुर प्रजामंडल को भारत छोड़ो आंदोलन से पूर्णतः अलग (निष्क्रिय) रखा। जयपुर प्रजामंडल का एक वर्ग भारत छोड़ो आंदोलन में सक्रिय भूमिका का निर्वहन करना चाहता था। जिसमें बाबा हरिश्चन्द्र, रामकरण जोशी, दौलतमल भण्डारी आदि शामिल थे। उन्होंने 1942 में एक नये संगठन 'आजाद मोर्चे' का गठन कर जयपुर में भारत छोड़ो आंदोलन का शुभारंभ कर दिया। सरकार ने आजाद मोर्चे के लगभग सभी कार्यकर्ताओं को गिरफ्तार कर लिया। 26 अक्टूबर, 1942 को जयपुर महाराजा ने संवैधानिक सुधारों हेतु एक समिति का गठन किया।
- 1945 में जवाहरलाल नेहरू की प्रेरणा से **आजाद मोर्चे** का प्रजामंडल में विलय हो गया। मार्च, 1946 में विधानसभा में टीकाराम पालीवाल द्वारा प्रस्तुत राज्य में उत्तरदायी शासन स्थापित करने का प्रस्ताव पास कर दिया गया। इसके बाद जयपुर प्रजामंडल के अध्यक्ष देवीशंकर तिवाड़ी को राज्य मंत्रिमण्डल में शामिल किया गया। इस प्रकार जयपुर राज्य राजस्थान का पहला राज्य बना जिसने अपने मंत्रिमंडल में गैर सरकारी सदस्य नियुक्त किया।
- 1 मार्च, 1948 को जयपुर के प्रधानमंत्री वी.टी. कृष्णामाचारी ने संवैधानिक सुधारों की घोषणा की। घोषणा का सभी ने स्वागत किया। मंत्रिमंडल में एक दीवान (प्रधानमंत्री), एक मुख्य सचिव (मुख्यमंत्री) एवं 5 सचिव (मंत्रीगण) बनाये गये। सर वी.टी. कृष्णामाचारी को दीवान, हीरालाल शास्त्री को मुख्य सचिव एवं देवीशंकर तिवाड़ी, टीकाराम पालीवाल एवं दौलतमल भंडारी को प्रजामंडल की ओर से सचिव बनाया गया। दो मंत्रीगण जागीरदारों से नियुक्त किये गये। वृहद् राजस्थान के निर्माण (30 मार्च, 1949) तक यही लोकप्रिय मंत्रिमंडल कार्य करता रहा।

• विभिन्न प्रजामंडल

प्रजामंडल विवरण

मेवाड़ प्रजामंडल	स्थापना-24 अप्रैल, 1938 को बलवंत सिंह मेहता की अध्यक्षता में अन्य कार्यकर्ता - माणिक्यलाल वर्मा, श्री भूरालाल बया।
------------------	--------------------------------------------------------------------------------------------------------------------

प्रजामंडल	विवरण
जयपुर प्रजामंडल	प्रथमतः 1931 में कर्पूरचन्द पाटनी की अध्यक्षता में गठित। 1936-37 में श्री चिरंजीलाल मिश्र की अध्यक्षता में पुनः स्थापित। अन्य कार्यकर्ता श्री चिरंजीलाल मिश्र, श्री हीरालाल शास्त्री, कर्पूरचंद पाटनी आदि थे। 1938 में श्री जमनालाल बजाज अध्यक्ष बने।
मारवाड़ प्रजामंडल	1934 में भँवरलाल सर्राफ, अभयमल जैन एवं अचलेश्वर प्रसाद शर्मा के प्रयासों से गठित।
मारवाड़ परिषद्	लोक 16 मई, 1938 को रणछोड़ दास गट्टानी की अध्यक्षता में अभयमल जैन (महामंत्री), भीमराज पुरोहित, जयनारायण व्यास, अचलेश्वर प्रसाद शर्मा द्वारा स्थापित।
बीकानेर प्रजामंडल	राज्य 4 अक्टूबर, 1936 को वैद्य मघाराम वैद्य (अध्यक्ष) व श्री लक्ष्मणदास स्वामी द्वारा गठित।
बीकानेर प्रजा परिषद्	राज्य 22 जुलाई, 1942 को बाबू रघुवर दयाल गोयल द्वारा गठित।
कोटा प्रजामंडल	राज्य प्रथमतः हाड़ौती प्रजामंडल के नाम से 1934 में पं. नयनूराम शर्मा एवं प्रभुलाल विजय द्वारा स्थापित। 1938 में पं. नयनूराम शर्मा, अभिन्न हरि एवं तनसुखलाल मित्तल के प्रयत्नों से स्थापित।
भरतपुर प्रजामंडल	दिसम्बर, 1938 में गोपीलाल यादव (अध्यक्ष), श्री किशनलाल जोशी, श्री जुगल किशोर चतुर्वेदी, मास्टर आदित्येन्द्र, ठाकुर देशराज आदि द्वारा स्थापित। 1939 में इसका नाम बदलकर 'भरतपुर प्रजा परिषद्' कर दिया गया।
सिरोही प्रजामंडल	23 जनवरी, 1939 को श्री गोकुलभाई भट्ट (अध्यक्ष), श्री धर्मचंद सुराणा,

प्रजामंडल

विवरण

घीसालाल चौधरी द्वारा स्थापित।

करौली प्रजामंडल

अप्रैल, 1939 में श्री त्रिलोकचन्द माथुर, चिरंजीलाल शर्मा व कुँवर मदन सिंह द्वारा गठित

शाहपुरा

प्रजामंडल

18 अप्रैल, 1938 को श्री रमेशचन्द्र औझा, लादूराम व्यास।

धौलपुर प्रजामंडल

1936 में कृष्णदत्त पालीवाल, श्री मूलचंद, श्री ज्वालाप्रसाद जिज्ञासु आदि द्वारा गठित।

अलवर

राज्य

प्रजामंडल

1938 में पं. हरिनारायण शर्मा एवं कुंजबिहारी मोदी द्वारा स्थापित।

जैसलमेर

राज्य

प्रजामंडल

15 दिसम्बर, 1945 को मीठालाल व्यास द्वारा जोधपुर में स्थापित। इसे असफल बनाने हेतु सामन्ती तत्त्वों द्वारा जैसलमेर राज्य लोक परिषद् का गठन किया गया।

जैसलमेर

राज्य

प्रजा परिषद्

1939 में श्री शिवशंकर गोपा द्वारा गठित।

बूँदी प्रजामंडल

1931 में श्री कांतिलाल द्वारा स्थापित।

बूँदी

राज्य

लोकपरिषद्

19 जुलाई, 1944 को श्री हरिमोहन माथुर व बृजसुंदर शर्मा द्वारा गठित।

डूंगरपुर

1 अगस्त, 1944 को श्री भोगीलाल पण्ड्या एवं शिवलाल कोटड़िया द्वारा

प्रजामंडल	विवरण
प्रजामंडल	स्थापित। अन्य सदस्य-कुरीचंद जैन, छगनलाल मेहता।
बाँसवाड़ा प्रजामंडल	भूपेन्द्रनाथ त्रिवेदी, धूलजी भाई भावसार, मणिशंकर नागर आदि द्वारा 27 मई, 1945 को स्थापित।
झालावाड़ प्रजामंडल	25 नवम्बर, 1946 को श्री माँगीलाल भव्य (अध्यक्ष) द्वारा गठित।
कुशलगढ़ प्रजामंडल	अप्रैल, 1942 में श्री भँवरलाल निगम (अध्यक्ष) व कन्हैयालाल सेठिया द्वारा गठित।
प्रतापगढ़ प्रजामंडल	1945 ई. में श्री चुन्नीलाल एवं अमृतलाल के प्रयासों से स्थापित।
किशनगढ़ प्रजामंडल	1939 में श्री कांतिलाल चौथानी द्वारा स्थापित

आधुनिक राजस्थान का निर्माण

भारतीय शहीदों के बलिदान तथा भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नेतृत्व में चले स्वतंत्रता आन्दोलन के परिणाम स्वरूप भारत 15 अगस्त 1947 को अंग्रेजों की अधिनता से मुक्त हो गया। परन्तु भारतीय स्वाधीनता अधिनियम 1947 की आठवीं धारा के अनुसार ब्रिटिश सरकार की भारतीय देशी-रियासतों पर स्थापित सर्वोच्चता पुनः देशी रियासतों को हस्तान्तरित कर दी। इसके अनुसा देशी रियासतों को आत्मनिर्णय का अधिकार प्राप्त हो गया। वे किसी भी अधिराज्य (भारत अथवा पाकिस्तान) में शामिल न होने पर अपना स्वतंत्र अस्तित्व रखते हुए एक राज्य के रूप में स्थापित हो सकती थी। ऐसा होने पर भारत खण्ड-खण्ड राज्यों में विघटित हो सकता था। भारत की एकता व अखण्डता नष्ट हो सकती थी किन्तु भारत के लौह पुरुष सरदार वल्लभ भाई पटेल ने इन रियासतों के भारत में विलय के विवाद का हल करने का प्रयास किया। देशी रियासतों पर नियंत्रण

रखने वाले भारत सरकार के राजनीतिक विभाग को समाप्त कर 5 जुलाई 1947 को सरदार पटेल की अध्यक्षता में 'रियासती सचिवालय' की स्थापना की गई जिसका उद्देश्य छोटी-बड़ी सभी रियासतों का विलीनीकरण या समूहीकरण भाषा, संस्कृति और भौगोलिक सीमा की समानता के आधार पर इस प्रकार करना था कि ये रियासतें एक संयुक्त राज्य के रूप में संगठित हो सकें।

स्वतंत्रता के समय राजस्थान में 19 देशी रियासतें, 3 ठिकाने (लावा, कुशलगढ़, नीमराणा) तथा एक चीफ कमिश्नरी क्षेत्र था अजमेर-मेरवाड़ा था।

रियासती मंत्रालय के अध्यक्ष सरदार वल्लभ भाई पटेल ने राजस्थान के एकीकरण या गठन की प्रक्रिया शुरू कर दी। सरदार पटेल ने अर्थात् रियासती मंत्रालय ने यह घोषणा कि भारत में वही देशी रियासत अपना स्वतंत्र अस्तित्व रख सकेगी जिसकी जनसंख्या 10 लाख व वार्षिक आय 1 करोड़ हो। इस आधार पर राज्य में केवल जयपुर, जौधपुर, उदयपुर और बीकानेर रियासत पृथक राज्य के रूप में रह सकते थे।

अतः इस घोषणा से छोटी-छोटी रियासतों में हड़कम्प मच गया क्योंकि वे मंत्रालय की शर्तों को पूरा नहीं कर पा रहे हैं। ऐसे में छोटी-छोटी रियासतों ने आपस में मिलकर एक संघ बनाने का निर्णय लिया व 25-26 जून को मेवाड़ महाराणा भोपाल सिंह की अध्यक्षता में उदयपुर में राजाओं का एक सम्मेलन आयोजित किया गया तथा राजस्थान युनियन के गठन की अपील की गई। कोटा महाराज भीमसिंह ने हाडौती संघ का प्रस्ताव रखा व डुंगरपुर के महाराज लक्ष्मण सिंह ने वागड़ संघ (डुंगरपुर व बांसवाड़ा) का प्रस्ताव रखा। लेकिन राजपूतों के राजाओं की आपसी शत्रुता के कारण किसी भी संघ का निर्माण नहीं हो सका। 18 मार्च 1948 से राजस्थान का एकीकरण प्रारम्भ हुआ जो 1 नवम्बर 1956 को 8 वर्ष 7 माह 14 दिन में पूर्ण हुआ। इसी के साथ एक नवीन राज्य अस्तित्व में आया।

चरण व राजधानी	रियासत व उद्घाटनकर्ता	प्रधानमंत्री, राजप्रमुख
प्रथम चरण - मत्स्य संघ स्थापना - 18 मार्च 1948 राजधानी - अलवर	अलवर, भरतपुर, करौली, धौलपुर रियासतें व नीमराणा ठिकाना उद्घाटनकर्ता - एन.वी. गोंडगिल	प्रधानमंत्री - शोभाराम कुमावत (अलवर के) राजप्रमुख - उदयभान सिंह (धौलपुर शासक) इसका नाम मत्स्य संघ - के.एम. मुंशी के कहने पर रखा।
द्वितीय चरण - पूर्व राजस्थान स्थापना - 25 मार्च 1948	कोटा, बुंदी, झालावाड़, बांसवाड़ा, टोंक, प्रतापगढ़, शाहपुरा, किशनगढ़, डुंगरपुर रियासतें, कुशलगढ़ ठिकाना व लावा	प्रधानमंत्री - गोकुल लाल ओसावा (शाहपुरा) राजप्रमुख - भीमसिंह (कोटा नरेश) के उपराजप्रमुख -

चरण व राजधानी

राजधानी-कोटा

रियासत व उद्घाटनकर्त्ता

ठिकाना को मिलाकर।

उद्घाटनकर्त्ता - एन.वी. गॉडगिल

प्रधानमंत्री, राजप्रमुख

बहादुर सिंह (बूंदी नरेश)

तृतीय चरण - संयुक्त
राजस्थान

स्थापना - 18 अप्रैल 1948

राजधानी - उदयपुर

पूर्व राजस्थान में उदयपुर रियासत
को मिलाया

उद्घाटनकर्त्ता - पं. जवाहर लाल
नेहरू

प्रधानमंत्री - माणिक्य लाल वर्मा
(उदयपुर)

राजप्रमुख - भोपाल सिंह
(उदयपुर नरेश)

उपराजप्रमुख - भीमसिंह (कोटा
नरेश)

चतुर्थ चरण -वृहद राजस्थान

स्थापना - 30 मार्च 1949

राजधानी -जयपुर

संयुक्त राजस्थान में जयपुर,
जोधपुर, जैसलमेर व बीकानेर
रियासतें।

उद्घाटनकर्त्ता - सरदार वल्लभ
भाई पटेल।

इसी दिन "राजस्थान दिवस"
मनाते हैं।

प्रधानमंत्री - हीरालाल शास्त्री
(जयपुर)

महाराज प्रमुख - भूपाल सिंह
(उदयपुर नरेश)

राजप्रमुख -मानसिंह द्वितीय (जयपुर
नरेश)

उपराजप्रमुख - भीमसिंह (कोटा
नरेश)

पंचम चरण - संयुक्त वृहद
(वृहत्तर) राजस्थान)

स्थापना - 15 मई 1949

राजधानी - जयपुर

वृहद् राजस्थान में मत्स्य संघ को
मिलाया डॉ. शंकर देव राय
समिति की सिफारिश पर मत्स्य
संघ को मिलाया।

प्रधानमंत्री पद समाप्त व मुख्यमंत्री
पद सृजित

प्रथम मुख्यमंत्री - हीरालाल शास्त्री

इनको शपथ राजप्रमुख -मानसिंह
द्वितीय ने दिलाई

चरण व राजधानी

षष्ठम् चरण - राजस्थान संघ
स्थापना - 26 जनवरी 1950
राजधानी - जयपुर

सप्तम चरण - राजस्थान
(वर्तमान)
स्थापना - 1 नवम्बर 1956
राजधानी - जयपुर

रियासत व उद्घाटनकर्त्ता

संयुक्त वृहद राजस्थान में सिरोही
(आबू-देल्वाड़ा को छोड़कर)
मिलाया।

राजस्थान संघ के सिरोही का
(आबू-देल्वाड़ा) भाग अजमेर
मेरवाड़ा व मध्यप्रदेश के मंदसौर
जिले के सुनेल टप्पा जोड़ा गया व
झालावाड़ का सिरोज क्षेत्र
मध्यप्रदेश को दे दिया।

प्रधानमंत्री, राजप्रमुख

मुख्यमंत्री - हीरालाल शास्त्री

राजप्रमुख - मानसिंह द्वितीय

इस दिन भारत का संविधान लागू
हुआ। अतः राजस्थान को विधिवत
नाम दिया गया।

मुख्यमंत्री - मोहनलाल सुखाड़िया

राजप्रमुख की जगह राज्यपाल पद
सृजित

प्रथम राज्यपाल - गुरूमुख
निहालसिंह



प्रिय दोस्तों नमस्कार,

मैं मनीष श्रीमाली समस्त इतिहासविदों, शोधार्थियों, विद्यार्थियों एवं इतिहास में रुचि रखने वाले सभी जिज्ञासु पाठकों का इतिहास को समर्पित इस वेबसाइट पर स्वागत करता हूँ। मैं वर्तमान में मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय में सीनियर रिसर्च फ़ैलो के रूप में शोधरत हूँ। अपने बचपन से ही मुझे इतिहास के प्रति आसक्ति रही है और इसी का परिणाम था कि मैंने दसवीं के बाद इतिहास विषय को लेकर कला संकाय में ही भविष्य निर्माण का निश्चय किया। इतिहास के इस आकर्षण का कारण बहुत हद तक मेरा ऐतिहासिक गाँव लोसिंग एवं ननिहाल, चेतक की समाधि स्थल, बलिचा गाँव रहे है।

वेबसाइट निर्माण का मुख्य उद्देश्य इस तकनीक एवं संचार क्रांति के युग में जहाँ उच्च शिक्षा वर्तमान दौर में कई द्रुत परिवर्तन से गुजर रही है अतः उसके साथ कदम से कदम मिलाते हुए इतिहास को तकनीक के साथ अद्यतन रखना है। दूसरा स्मार्टफोन एवं मोबाइल क्रांति ने विश्वविद्यालय की कक्षा से बहुत दूर गाँव में भी ई-क्लास का निर्माण कर दिया है अतः हमारी कोशिश है कि हम इस वेबसाइट के माध्यम से अनुभवी, विद्वान प्रोफेसर एवं शोधार्थियों के ज्ञानवान एवं सारगर्भित आलेख उन तक पहुँचा सके। तीसरी महत्वपूर्ण बात इतिहास एक प्रगतिशील विषय है जो सदैव इतिहासकारों द्वारा खोजे जाने वाले नवीन तथ्यों एवं व्याख्याओं के द्वारा निरंतर प्रगती के पथ पर अग्रसर है किंतु पुरानी पाठ्य पुस्तकों में बदलाव के अभाव में पाठक नवीन दृष्टिकोण से परिचित नहीं हो पाते है। अतः नवीन शोधपूर्ण आलेखों का प्रकाशन कर पाठकों को अद्यतन रखना मुख्य ध्येय है। अंतिम एवं महत्वपूर्ण वर्तमान में गलाकाट प्रतियोगिता के इस दौर में प्रतियोगी परिक्षाओं की तैयारी कर रहे परिक्षार्थियों को अच्छी व उपयोगी सामग्री उपलब्ध करवाना भी हमारा लक्ष्य है।

यह पुस्तक मैं ईश्वर तथा अपने माता-पिता, भाई एवं जीवनसंगिनी खुशबू तथा मित्रों को समर्पित करता हूँ जिन्होंने मुझे पुस्तक निर्माण करने के लिए प्रेरित किया एवं धैर्यपूर्ण इस कार्य को अंजाम तक पहुँचाने में हरसंभव मदद की। मैं धन्यवाद देना चाँहूंगा मेरी शोध निर्देशिका प्रो. मीना गौड़ को जिन्होंने सदैव मुझे कुछ नया और बेहतरीन करने के लिए प्रोत्साहित किया। साथ ही प्रख्यात इतिहासविद के.एस. गुप्ता सर विभागाध्यक्ष प्रो. प्रतिभा, प्रो. दिग्विजय भटनागर एवं सहायक प्रो. पीयूष भादविया ।

मनीष श्रीमाली

मेवाड़ का इतिहास



इस रंगीलो राजस्थान में सब में न जाने कब क्या दिख जाये, जहाँ प्रकृति ने अपने विविध रंगों से इसका श्रृंगार किया है वहीं नदी, नाले, मैदान, पहाड़ एवं मरुभूमि इसकी सुन्दरता में चार चाँद लगा हुए है। इसके मैदानों एवं पहाड़ों पर खड़े दुर्ग, स्मारक एवं इमारते जहाँ शौर्य, कला एवं प्रेम का अनूठा मिश्रण प्रस्तुत करते है वहीं ये उस गौरवशाली एवं सुनहरे अतीत के साक्षी भी हैं जब राजस्थान की तूती दिल्ली में बोलती थी, उस अतीत के साक्षी है जिसमें शूरवीरों के शौर्यपूर्ण कृत्य को इतिहास के पृष्ठों पर रक्त से लिखा गया।

राजस्थान की धरा वीर प्रसूता रही है जिसके पग-पग पर एक रणभूमि है जहाँ पर रणबाँकुरों के रणकौशल की गाथाएँ इसका कण-कण गाता है। इतिहास के कानन में विचरण करने वाले मनीषियों को राजस्थान की धरा पर जंमे शूरवीर, पराक्रमी योद्धाओं के साहसिक कर्मों ने सदैव आकृष्ट किया है। इन्हीं मनीषियों में एक कर्नल टॉड भी है जिन्होंने स्वयं कहाँ है कि "राजस्थान में कोई भी छोटा-सा राज्य भी ऐसा नहीं है, जिसमें धर्मोपल्ली जैसी रणभूमि न हो और शायद ही कोई ऐसा नगर मिले, जहाँ लियोनिडस जैसा वीर पुरुष उत्पन्न न हुआ हो।" यह थोरों की धरती वीरता व पराक्रम के साथ ही अपने राष्ट्र प्रेम, संस्कृति, स्वामीभक्ती एवं गौरक्षा के लिए प्राणों को उत्सर्ग करने हेतु तत्पर रहने वाले शूरवीरों की संस्कृति का प्रतिनिधित्व करती है।



अनावरणशिलकर्ता : हिम्मत सिसोदिया